दृष्टि और विचार

बहुत दिन पहले की बात है, पिलानी गांव में किसी विशेष संप्रदाय के दो वैष्णवों के साथ घनश्यामदासजी की भेंट हुई। उन्होंने उनसे पूछा, 'तुम लोगों के धर्म की विशेषता क्या है, मुझे बता सकते हो?'

उनमें से एक ने कहा, 'कहना कठिन है, ठीक समझाया नहीं जा सकता।'

दूसरे ने कहा, 'अवश्य कहा जा सकता है। बात बिलकुल सीधी है। गुरु के उपदेश से पहले अपने आपको जानना होगा। जब अपने आपको हम जान लेते हैं, तब अपने बीच 'उसको' प्राप्त किया जाता है।'

घनश्यामदासजी ने उनसे पूछा, ''उसको' यानी क्या?'

उसने कहा, ''उसको' यानी वही जो है, उसके अलावा और कुछ नहीं है।'

घनश्यामदासजी मुस्कराये। वे सोचने लगे, 'मैंने कभी किसी को गुरु तो बनाया नहीं। गुरु के नाम पर पिलानी की याद आती है', वह पिलानी—लालसाएं, आशाएं सारी सामने थीं। 'आप ईंट, पत्थर, वृक्ष, मनुष्य सबसे मिलें और पढ़ाने के साथ-साथ पढ़ें भी उन्हीं से। कभी बारिए के पास बैठें तो कभी बूढ़े नाई से हजामत बनवाएं : सीता से कुर्त्ता सिलवाएं और रूपा से पढ़ें।'[१९९]

इसी पिलानी से बीजमंत्र-रूप में विचारक घनश्यामदासजी को दृष्टि और विचार मिले थे। पिलानी, बंबई, कलकत्ता इसी त्रिभुज पर चलकर घनश्यामदासजी ने अनुभव किया था कि पृथ्वी पर सब लोग यात्रा कर रहे हैं। प्रत्येक क्षण पृथ्वी के सभी लोग अन्न-वस्त्र के लिए, अपनी छोटी-बड़ी सैकड़ों दैनिक आवश्यकताओं के लिए प्रयत्नशील हैं। लेकिन केवल इसी आहितक गति से वे अपनी ही प्रदक्षिणा नहीं

१९९. बिखरे विचारों की भरांटी, पृष्ठ २५७

कर रहे--इसके साथ, जाने-अनजाने, वे महाकाश में किसी अन्य केंद्र के चारों ओर भी यात्रा कर रहे हैं।

घनश्यामदासजी की जीवन-यात्रा का यही आत्मबोध है। मनुष्य अपने आपको पाने के लिए बाहर निकला है। बिना अपने को प्राप्त किये वह 'उसको' नहीं पा सकता, जो अपने से भी बढ़कर अपना है। अपने आपको विशुद्ध करके, परिपूर्ण करकै पाने के लिए मनुष्य कैसी-कैसी तपस्या करता है। शैशव से ही वह अपनी प्रवृत्तियों को शिक्षित और संयत बनाता है, बड़े-बड़े आदर्शों को सामने रखकर वह अपनी समस्त छोटी-छोटी वासनाओं को नियमित करने का प्रयत्न करता है और ऐसे आचार-अनुष्ठान निर्माण करता है जो उसे बार-बार याद दिलाते रहे हैं कि 'उनमें सुव्यवस्था है, नियम की पाबंदी है और उनमें चरित्रबल है।'२००

घनश्यामदासजी का यह निश्चित विचार था कि जब मनुष्य अपने आपको सहज भाव से अपना नहीं बना पाता, तब वह सूत्रच्छिन्न माला की तरह धूल में मिल जाता है। इसलिए व्यवस्था का दर्जा उनके विचार में सर्वोपरि था। वे अपने दैनंदिनी जीवन से लेकर अपने घर-परिवार के सभी सदस्यों, विशेषकर बच्चों, बालकों और युवकों को यह संस्कार देते रहते थे कि 'व्यवस्था अनुशासन का ही एक अंग है। लड़कों में बचपन से ही आदत डालनी चाहिए कि वे हर चीज को सुव्यवस्थित रखें। अनुशासन और व्यवस्था से दक्षता आती और बढ़ती है। किसी की दक्षता परखने के लिए आम तौर से यह देखा करता हूं कि लड़के ने अपने कोट के बटन बंद किये हैं या नहीं, नाखून कटवाकर साफ रखता है या नहीं, अंगुलियों पर स्याही के दाग तो नहीं हैं। कपड़े मैले हैं या उजले। इन छोटी-छोटी बातों से मनुष्य की छिपी हुई बड़ी-बड़ी मनोवृत्तियों का पता सहज में ही लग जाता है।'

"मनुष्य के अत्यंत साधारण आचरण से ही पता चल जाता है कि उसमें सच्चाई कहां तक है। जो छोटी-छोटी बातों में सच्चाई का प्रयोग नहीं करता, जो अपनी सारी क्रियाओं के संबंध में अव्यवस्थित है, जिसने न सोने-उठने का नियम बना रखा है और न खाने और व्यायाम का, जो भोजन स्वास्थ्य की दृष्टि से नहीं करता, केवल स्वाद के निमित्त करता है, ऐसे मनुष्य के जीवन से बड़ी-बड़ी बातों की आशा नहीं करनी चाहिए। जो लोग अव्यवस्थित हैं, समय के पाबंद नहीं हैं, उनके नाम को उच्चाकांक्षाओं के बही-खाते में 'नावें' की तरफ लिख देना चाहिए।

२००. बिखरे विचारों की भरोटी, पृष्ठ ३७९

सफलता ऐसे लोगों के लिए पैदा नहीं हुई, जो अव्यवस्थित हैं, असंयमी हैं और बिना चरित्र-बलवाले हैं।"२०१

उनकी बातें ऐसी थीं, जिन्हें कहने का साहस साधारण व्यक्तियों को नहीं होता। वे निस्संकोच ऐसी बातें अपने घर-परिवार के बच्चों से कहा करते थे और देखते थे कि ये बातें उनके आचरण में आ रही हैं या नहीं। लक्ष्मीनिवासजी के सुपुत्र सुदर्शनकुमारजी बताते हैं, "बिड़ला पार्क के मकान में जब हम लोग एक साथ रहते थे, तो एक बार दादोजी मेरे कमरे में आये। उस समय मेरी उम्र यही पांच-छह साल की रही होगी। उन्होंने देखा, मेरा कमरा अस्त-व्यस्त है, मेरे खिलौने इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। उन्होंने चुपचाप मुझे यह सजा दी कि वे मुझसे तीन दिनों तक नहीं बोलेंगे। मुझे बहुत दुख हुआ। मैंने अपने आपको सुधारा। दादोजी से क्षमा मांगी। मेरा व्यवस्थित कमरा देखकर उन्होंने मेरी पीठ थपथपायी। उनका यह आचरण मुझे बहुत प्रेरणा देता है और मुझे उनकी यह बात सदा याद रहती है कि मनुष्य के अत्यंत साधारण आचरण से ही पता चल जाता है कि उसमें सच्चाई कहां तक है।"

घनश्यामदासजी ने दूसरों के मन को खुश करते हुए अपनी बात कहना नहीं चाहा। वे जानते थे कि मनुष्य अपने मन से कहीं बड़ा है। मनुष्य अपने को जो समझता है वहीं उसकी समाप्ति नहीं है। इसीलिए महापुरुषों ने अपना दूत सीधे मनुष्यत्व के राज-दरबार में भेजा, बाहरी दरवाजे के चौकीदार को मीठी बातों से प्रसन्न करके अपने काम का मूल्य नष्ट नहीं किया। संसार-काम-काज में लगे हुए लोग घनश्यामदासजी की इन बातों से मन-ही-मन अक्सर नाराज होते थे और सोचते थे कि ये किसी काम की बातें नहीं हैं। लेकिन बड़ी-बड़ी काम की बातें समय के स्रोत में बहते-बहते बुदबुदों की तरह विलीन हो गयी थीं। विलीन होते हुए देखकर घनश्यामदासजी ने कहा, "निःस्वार्थ भाव से की गयी छोटी-सी सेवा भी हजारों व्याख्यानों और अन्यान्य आधुनिक धर्म-प्रचार के मार्गों से लाख दर्जे अच्छी है।"२०२

यही विचार उनके आचरण और कर्म-जगत का मूलाधार था। इसके पीछे घनश्यामदासजी की धर्मनिष्ठा थी। प्रायः लोगों की धारणा है कि घनश्यामदास बिड़ला प्रधानतः पाश्चात्य विचारधारा के व्यक्ति थे। ऐसा वे ही लोग कहते हैं जो उनकी व्यावहारिक धर्मनिष्ठा से परिचित नहीं हैं। यह अवश्य है कि घनश्याम-

२०१. बिखरे विचारों की भरौटी, पृष्ठ ३७८-३७९
२०२. वही, पृष्ठ १४६

दासजी धर्म के नाम पर जो आडंबर और ढोंग प्रचलित हो गया है, उसके प्रति आस्थावान नहीं थे। वे कर्मकांड के प्रपंच में नहीं पड़े, तथापि उनकी धर्मनिष्ठा अपार थी। 'यज्ञोवैश्रेष्ठतमः कर्मः' अच्छे कर्मों को ही वे श्रेष्ठ यज्ञ और धर्म मानते थे। वे सर्वज्ञ, सर्व-शक्तिमान, सर्वव्यापक परमेश्वर की सत्ता में पूर्ण विश्वास रखते थे। मनुष्य-जीवन के बारे में उनका कहना था कि 'कर्मैजीवनं नित्यं विकासस्तस्य भास्वरः।' कर्म ही जीवन है, उसका प्रकाशमय विकास ही हमारा कर्तव्य है।

घनश्यामदासजी चाहे भारत में हों, या भारत के बाहर जहां कहीं भी हों, वे अपनी शैया के पास 'गीता', 'आश्रम-भजनावली' और एक 'माला' अवश्य रखते थे। वे सादा जीवन, उच्च विचार के आदर्श में विश्वास रखते थे। उन्होंने अनेक अवसरों पर अपना यह विचार बार-बार दोहराया, 'हमारा भारत धर्म-परायण देश है। धर्म-भावना भारत देश के जीवन में ओत-प्रोत है, जो अनंत काल तक बनी रहेगी।'

धर्म के बारे में घनश्यामदासजी का क्या विचार है, इसके उत्तर में उन्होंने हमेशा 'बापू' का नाम लिया। इस नाम में धर्म और अर्थ दोनों आ जाते हैं, पर धर्म मुख्य था, अर्थ गौण।

जिस तरह गांधीजी के लिए सत्य और ईश्वर ये दोनों शब्द पर्यायवाची हैं, उसी तरह घनश्यामदासजी के लिए भी सत्य ही ईश्वर है। "धर्म और अर्थ दो चीजें नहीं हैं। सबसे बड़ा अर्थ है : परम+अर्थ=परमार्थ।"[२०३]

परमार्थ का पाठ घनश्यामदासजी को गांधीजी से प्राप्त हुआ। इससे भी आगे उन्हें यह प्राप्त हुआ कि उपनिषद्, गीता, रामायण केवल पाठ की वस्तुएं नहीं हैं, आचरण की वस्तुएं हैं।

घनश्यामदासजी में जब धर्म की भावना जाग्रत हुई, तब उन्होंने अनेक शास्त्रों का अध्ययन किया। हिन्दू धर्म की खोज की। ईसाई मत का अध्ययन किया। इस्लाम के ग्रंथ पढ़े। जरथुष्ट्र की रचनाएं पढ़ीं। चित्त को निर्विकार रखकर बिना पक्षपात के सब धर्मों के तत्त्वों को समझने की कोशिश की। आसक्ति-रहित होकर सत्यधर्म को, जो अंत गुफा में छिपा था, जानने का प्रयत्न किया। 'धर्मस्य तत्वं निहितं गुहायाम्' इससे उनकी निरपेक्षता बढ़ी।

उनका प्रयत्न तेजस्वी बना। उन्हें सत्य मिला। उनमें बल आया। उनमें नीर-क्षीर-विवेक आया। साथ ही, निश्चयात्मक बुद्धि भी प्रबल हुई। उनके निश्चय फौलाद

२०३. मेरे जीवन में गांधीजी, पृष्ठ ५२

बनने लगे। अंतर्नाद सुनायी देने लगा। इस अंतर्नाद की चर्चा में उनका संकोच भागा।

यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।

धर्म के प्रसंग में घनश्यामदासजी ने इस श्लोक की अपने विशेष ढंग से व्याख्या की है, "इस ईश्वरीय प्रतिज्ञा का अर्थ इतना ही है कि जिस समय संताप होता है, उस समय कोई दैवी विभूति उस संताप को दूर करने के लिए प्रकट होती है। मूक पशुओं की यज्ञ के नाम पर होनेवाली हत्या को मिटाने और बढ़े हुए भोग-विलास और विषय-वासना पर अटकाव डालने के लिए बुद्ध जन्मे, तो गोरी प्रजा के बढ़े हुए लोभ को अटकाने, उनके द्वारा पीली, काली, गेहुंआ प्रजा के दुःख-दर्दों को काटने, उनकी परतंत्रता मिटाने, उनकी जड़ता हटाने और संसार में अहिंसा-स्थापना के लिए गांधीजी ने जन्म लिया है। हेतु तो दोनों में धर्म का अभ्युत्थान था, पर बाहरी रूप एक का संन्यासी का था, दूसरे का राजनीतिक नेता का है।"२०४

हिंदुस्तान एलुमिनियम, पिलानी इन्वेस्टमेंट, जियाजी राव काटन मिल्स, भारत शूगर मिल्स, टैक्समैको, केसोराम इंडस्ट्री एंड काटन मिल्स, हिंदुस्तान मोटर्स, सेंचुरी मिल्स, ओरियंट पेपर, बिड़ला जूट, ग्वालियर विविंग, रामेश्वरा जूट मिल्स आदि सारे व्यवसाय घनश्यामदासजी की दृष्टि में केवल साधन थे, लक्ष्य था उनका–ईश्वर साक्षात्कार।

घनश्यामदासजी के अनुसार रूप के साथ स्वरूप, लोक के साथ परलोक, स्थूल के साथ सूक्ष्म, गति के साथ प्रगति, आचार के साथ विचार का अत्यधिक महत्त्व था। उनका विश्वास था कि केवल शास्त्र पढ़ने से कुछ नहीं होता है, उसके साथ अक्ल भी अनिवार्य है। जैसे, आचार के साथ विचार आवश्यक है। वह लोक-कल्याण की भावना को ही ईश्वर-भजन मानते थे। इन सारे विषयों पर उन्होंने 'रूप और स्वरूप' नामक पुस्तक में विस्तार से लिखा है।

घनश्यामदासजी अपने जीवन में जिस व्यक्ति से सबसे अधिक प्रभावित हुए हैं : वे थे––महात्मा गांधी। घनश्यामदासजी का कर्मयोग पर विश्वास था और उन्होंने उसे अपने जीवन में उतारने का प्रयास किया। जिस पुस्तक ने उन्हें सबसे अधिक प्रभावित किया, वह है 'श्रीमद्भगवद् गीता' जो कर्मयोग के सिद्धांत को प्रतिपादित करती है। अपने युवा जीवन में उन्होंने गीता के कई भाष्य पढ़े थे, जिनमें

२०४. बिखरे विचारों की मराठी, पृष्ठ ६१

संत ज्ञानेश्वर और लोकमान्य तिलक के भी हैं, परंतु अपने जीवन के अंतिम पच्चीस वर्षों में वे स्वामी चिन्मयानंद द्वारा किये गये गीता भाष्य को ही अपना मार्गदर्शक मानते रहे। लेकिन यह भाष्य भी मात्र उनकी जिज्ञासा शांति के लिए था, अन्यथा अपने ढंग पर गीता के श्लोकों की व्याख्या किया करते थे। उनका दृढ़ विश्वास था कि श्रीमद्भगवद् गीता कर्मयोग का अक्षय-वाङ्मय है जिसकी शिक्षाओं के अनुसार जीवन-यापन से श्री, विजय और विभूति की प्राप्ति के साथ-साथ मानव-जीवन सफल हो जाता है। उन्होंने 'योगः कर्मसु कौशलम्' मंत्र को अपने जीवन में चरितार्थ किया है। कुशल शब्द का अर्थ उन्होंने उचित, मंगल, शुभ, योग्य, दक्ष, चतुर, प्रवीण एवं कल्याण रूप में किया। 'कर्मसु कौशलम् एवं योगः' काम करने में कुशलता, दक्षता, प्रवीणता ही योग है, ऐसा वे मानते थे।

घनश्यामदासजी की धार्मिक निष्ठा से ही यह विचार उपजा था कि 'संपत्ति कोई अमिश्रित विभूति नहीं है। इसके दोनों पहलू हैं। लक्ष्मीजी की स्रोतधारा में अमृत के साथ विष का प्रवाह भी बहता रहता है। 'जड़-चेतन, गुण-दोष मय बिस्व कीन्ह करतार' इस लिहाज से लक्ष्मीजी भी गुण-दोषमय हैं। दोष को ग्रहण करने-वाला, स्रोत का विषैला हिस्सा पीकर, मदमस्त होकर अपना सर्वनाश कर बैठता है और अमृत पीनेवाला अमर बनता है। कलाकार स्वरों की सरगम पर अंगुलियां रखकर मनमोहक स्वरों से लोगों के दिलों को मोह लेता है और अनाड़ी उसी सरगम से लोगों के कानों को आघात पहुंचाता है। परंतु परिवार का संपन्न होना मेरे लिए घातक साबित नहीं हुआ, इसका कारण था हमारे परिवार की परंपरा। मेरे पितामह और पिता दोनों सरल प्रकृति के, ईश्वर में श्रद्धा रखनेवाले धर्मभीरु थे।'

घनश्यामदासजी की दृष्टि में ईश्वर-प्रार्थना में श्रद्धा का महत्त्व अवश्य है, पर उनकी ज्यादा श्रद्धा काम में रही—'हाथ काम, मुख राम, हिरदे सांची प्रीत।' उनका विश्वास था कि कठोर जीवन ही एकमात्र जीने योग्य जीवन है। जिस जीवन में कोई संघर्ष न हो, कोई चुनौती न हो, जो आराम-आराम से कट गया हो, वह भी क्या कोई जीवन है? उन्हें चुनौती-भरे काम अच्छे लगते थे, और वे उनका स्वागत करते थे। यदि जीवन में कठिनाइयां और समस्याएं न हों, तो ऐसा जीवन अपने आपमें नीरस और निर्जीव बन जायेगा। वे सदैव आशावादी एवं महत्त्वाकांक्षी रहे। उनकी इच्छा-शक्ति दृढ़ता-युक्त थी। वे कभी विचलित नहीं होते थे। विरुद्ध समय में भी अपने मस्तिष्क को असंतुलित नहीं होने देते थे। उनमें बुद्धि, विवेक और साहस तीनों की प्रखरता थी। निर्णय लेने में आश्चर्यजनक क्षमता थी।

घनश्यामदासजी के जीवन में धर्म, कर्म के साथ सेवा का आश्चर्यजनक योग था। इस प्रसंग में उनका विश्वास था, "सेवा करनेवाले का तो केवल सेवा का ही अधिकार है, फलाकांक्षा का नहीं--'कर्मण्येवाधिकारस्ते'। हमारी सेवा से कहीं उलटा फल न मिल जाये, ऐसा विचार करना ही ईश्वर में विश्वास की कमी प्रकट करना है। 'कौंतेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति।' इन वाक्यों का यदि कोई अर्थ है तो हमें निश्चित रहना चाहिए और भरोसा रखना चाहिए कि सेवा का फल, यदि वह किसी बिना लोभ के की गयी है, तो अच्छा ही होगा।"२०५

दरिद्रनारायण के मंदिर में, हरिजनों की बस्तियों में, महात्मा गांधी की सेवा में, अपने उद्योग-धंधों में रहकर और जीकर घनश्यामदासजी ने यह प्राप्त किया कि मनुष्य अल्प है, उसकी शक्ति अल्प है, अतः उसका कार्यक्रम भी अल्प होता है। पस्तहिम्मती की तह में अभिमान होता है। हम पहले ही अपनी शक्ति बड़ी मान लेते हैं, फिर कार्य की गुरुता सामने आने पर उत्साह टूटने लगता है। जहां अपनी शक्ति को अल्प मानकर ही काम आरंभ किया जाये, वहां उत्साह टूटने के लिए कोई गुंजाइश नहीं होती, क्योंकि वहां शुरू से ही ईश्वर को रखवाला मान लिया जाता है। "...ईश्वर-आराधना के बिना उद्योग अकेला क्या कर सकता था? शुद्ध उद्योग वही है, जिसमें उद्योग की कमी न हो, अपनी निर्बलता का ज्ञान हो, फल क्या होगा, इससे बेफिक्री हो।"२०६

सामाजिक विषयों में घनश्यामदासजी का ध्यान शिक्षा, लोक-कल्याण, अर्थ-व्यवस्था, हिंदुओं की नैतिक चुनौती, भारतीय जीवन के अंतर्विरोध, सामाजिक कुरीतियां, प्राकृतिक चिकित्सा और पश्चिम-पूरब जैसे विषयों की ओर गया। घनश्याम-दासजी की शिक्षा की कहानी एक अजीब-सी कथा है, जिसकी विस्तार से चर्चा लेखक के रूप में स्वयं घनश्यामदासजी ने 'वे दिन' पुस्तक में की है। शिक्षा-संपादन-क्षेत्र में उन्होंने अपनी एक अजीब-सी पद्धति स्वयं निर्मित की थी। उस पद्धति से उनका यह पक्का स्वभाव बन गया था कि बिना शिक्षक की सहायता से ही विद्या-उपार्जन करने की कोशिश की जानी चाहिए। इसलिए उन्होंने जो भी कुछ स्कूल छोड़ने के बाद सीखा, वह अपने खुद के परिश्रम से, और पुस्तकों की सहायता से। इसी से उन्हें यह दृष्टि मिली, "हमने गुरु पर आवश्यकता से अधिक बोझ लाद दिया है। गुरु का आवश्यकता से अधिक सहारा लिया है। यह मेरी समझ में मानसिक आलस्य के लक्षण

---

२०५. बिखरे विचारों की भरोटी, पृष्ठ ३५४
२०६. वही, पृष्ठ ३५४

हैं। मेरा··· ख्याल है कि मनुष्य को स्वयं ही अपने आपका गुरु बनना चाहिए। दत्तात्रेय ने पशु-पक्षियों तक से सीखा, पर स्वयं ही तो सीखा। गैलीलियो, एडीसन, बेंजामिन, फ्रेंकलिन, जेम्स वाट, मैडम क्यूरी इन सबने नये-नये आविष्कार गुरु से सीखकर नहीं किये, खुद अपने आप ही किये। इसलिए मनुष्य गुरु का अनावश्यक आश्रय न लेकर स्वयं अपने आपको गुरु बनाये, तभी वह प्रगति कर सकता है। तोते की तरह रटंत करनेवाला तो तोता ही रह जाता है।"२०७

घनश्यामदासजी का यह मानना है कि गुरु सर्वविद् नहीं होते। "गुरु भी कई अंशों में उतने ही बुद्धू हैं, जितने कि हम सब हैं। मैंने बड़े-बड़े विद्वानों को मूर्खता की बातें करते पाया है। एक बड़े विद्वान ने मुझे चकित कर दिया, जब उसके मुंह से सुना कि उसकी कौटुंबिक दुर्गा सवा रुपये का प्रसाद पाकर उसे बड़ी-बड़ी आफतों से ऐन मौके पर बचा लेती है।"२०८

उनका यह दृढ़ विचार था कि छात्रों की शिक्षा एकांगी नहीं होनी चाहिए। उनका पठन-पाठन विविध विषयों का होना चाहिए। विज्ञान या इंजीनियरिंग का छात्र महज लेबोरेटरी या वर्कशाप तक ही सीमित न रहे, उसका दायरा अन्य क्षेत्रों में भी थोड़ा-थोड़ा होना चाहिए। आजकल ह्यूमेनिटी के नाम से अन्य विषयों का भी विज्ञान और इंजीनियरिंग की शिक्षा में प्रवेश हुआ है, पर यथेष्ट नहीं। बात तो यह है कि आर्ट का छात्र इतिहास, फिलासफी भी कुछ मात्रा में जाने, यह आवश्यक है। कुछ-कुछ सब विषयों का और अत्यधिक एक विषय का ज्ञान हो, पाठ्यक्रम की बुनियाद ऐसी होनी चाहिए। यही कारण है कि पिलानी के 'बिड़ला इंस्टीट्यूट आफ टेक्नालाजी एंड साइंस' में जो शिक्षा-पद्धति अपनायी गयी है, वह अपने तरह की अलग है। प्रथम वर्ष में जो पाठ्य पुस्तकें पढ़ायी जाती हैं, वे एक-सी हैं, चाहे वह विद्यार्थी इंजीनियरिंग का हो, विज्ञान का अथवा मानव-शास्त्र का। इससे मानव-शास्त्र के विद्यार्थी को भी कंप्यूटर की कार्य-विधि के बारे में भी पढ़ना पड़ता है। इससे सभी विद्यार्थियों की नींव विज्ञान की मूलभूत जानकारियों के बारे में मजबूत हो जाती है। द्वितीय वर्ष, मानव-शास्त्र पढ़ने वाला विद्यार्थी दूसरी ओर भेज दिया जाता है, किंतु विज्ञान और इंजीनियरिंग पढ़ने वाले छात्रों के लिए वही पाठ्यक्रम आगे चलता है, जो विज्ञान के क्षेत्र में उनकी नींव को और मजबूत करता है। तीसरे वर्ष से और उसके बाद विज्ञान और इंजीनियरिंग के छात्रों के पाठ्यक्रम एकदम अलग हो जाते हैं।

२०७. बिखरे विचारों की भरोटी, पृष्ठ ३१
२०८. वही, पृष्ठ ३२

पढ़ाई का एक अनोखा तरीका है ।

घनश्यामदासजी ने लोक-कल्याण को ही ईश्वर-भजन माना था । इस प्रसंग में उनका एक संस्मरण उल्लेखनीय है—एक सज्जन ने गांधीजी को लिखा कि "अब आप संसार में थोड़े ही दिनों के मेहमान हैं, इसलिए बेहतर यही है कि आप सारे काम-धाम छोड़कर अपना अंतिम समय हरिभजन में बिताएं ।"

गांधीजी ने उत्तर भेजा, "हमारी गरदन तो हर क्षण काल के हाथों में पड़ी है, इसलिए सारा-का-सारा जीवन ही अंतिम घड़ी है, ऐसा मानना चाहिए। और मेरी बात तो यह है कि मेरा प्रतिक्षण ईश्वर-भजन में ही व्यतीत होता है ।"

घनश्यामदासजी के लिए गांधीजी का यह उत्तर ईश्वर-भजन, अर्थात लोक-कल्याण का मर्म है। उनका विश्वास था 'यज्ञः कर्म समुद्भवः'—यज्ञ कर्म में ही समावेश है । 'नहि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् ।' किसी भी मनुष्य का एक क्षण भी कर्म के बिना नहीं बीतता। प्रश्न इतना ही है कि वह कर्म 'स्व' के लिए होता है या 'पर' के लिए ? जो कर्म 'पर' के लिए है, वही यज्ञ है। स्वार्थी लोग जिस तरह आसक्त होकर अपने लिए कर्म करते हैं, महापुरुष अनासक्त होकर निरंतर लोगों के कल्याण के लिए कर्म करते हैं।

अर्थव्यवस्था के अंतर्गत घनश्यामदासजी इतने तत्त्वों का ध्यान रखते थे—सबसे पहले एक ऐसा वातावरण, जिसमें अधिकारियों को निर्णय लेने के लिए प्रोत्साहन मिले, लाइसेंस-व्यवस्था, मूल्य-नीति, बिजली, मजदूर-मालिक-संबंध, परिवहन और सरकारी नियम बनाम मानवीय नियम । इन सारे तत्त्वों को ध्यान में रखकर उन्होंने 'रुपये की कहानी' नामक पुस्तक का समापन करते हुए लिखा, "हमारे पास फालतू जनशक्ति है, अनदुहे साधन हैं, बेकार पड़ी मशीनें हैं। हम उनका उपयोग क्यों न करें ? हमारे पास आटा, चीनी, घी है। आप उनसे हलवा क्यों नहीं बना सकते ? पर हम हलवा नहीं बनाते, हम बस अपने को भूखा मार रहे हैं। ··· निर्जन सड़क पर एक मूर्ख भी कार चला सकता है। इसके लिए कार चलाने के लाइसेंस की भी जरूरत नहीं, लेकिन जब सड़कों पर भारी भीड़ हो तो गाड़ी को संभालने और भीड़ में से निकालने के लिए एक होशियार ड्राइवर चाहिए ।"२०९

डा० अंबेडकर ने जब हिंदू धर्म को त्यागने का अपना निश्चय प्रकट किया तब चारों तरफ तहलका-सा मच गया था । उसी संदर्भ में घनश्यामदासजी ने उसे हिंदुओं की नैतिक चुनौती मानकर पूरी वस्तुस्थिति का विश्लेषण किया था—

२०९. 'बिखरे विचारों की भरांटी, पृष्ठ २३६

"आज तक हजारों विधवाएं, अनाथ और हरिजन विधर्मी बन गये हैं, और बनते जा रहे हैं। मैं एक भी ऐसे नव-विधर्मी को नहीं जानता, जिसने कुरान या बाइबिल पर आशिक होकर चुटिया कटाई हो। किसी ऐसे समाज-परित्यक्त से पूछिए, वह बतायेगा कि हिंदू-समाज को उसने नहीं, किंतु समाज ने उसे त्याग दिया है। फिर अंबेडकर के इस निश्चय पर इतनी घबराहट क्यों ? और यदि रोग से मुक्त ही होना अभीष्ट है, तो हम यह क्यों नहीं देखते कि अंबेडकर भी उसी पुरानी लकीर पर जा रहे हैं, जिस पर से करोड़ों हिंदू त्रस्त होकर हिंदू-समाज को तिलांजलि देते हुए गुजर गये हैं। जब कोई लड़की मुसलमान द्वारा भगायी जाती है, तब हमें मुसलमानों पर रोष आता है, पर क्यों नहीं हम अपनी नालायकी पर रोष करते, जो उस लड़की के भगाये जाने की जिम्मेदार थी ?"२१०

भारतीय जीवन के अंतर्विरोधों का अध्ययन घनश्यामदासजी ने गहराई में जाकर किया था। अंग्रेजों के सहवास में रहकर उन्होंने 'अपने' और 'उनके' व्यक्तिगत गुण-दोषों का विशेष ज्ञान प्राप्त किया था। भारतीय जीवन के अंतर्विरोधों में उन्होंने अहंकार और कायरता की बात पकड़ी थी।

"हम बलवान की चापलूसी करते हैं, गरीब पर जुल्म करते हैं। अपनी स्त्रियों की रक्षा और देश, जाति-धर्म के प्रति अत्याचारों का सामना करने की असमर्थता को हम 'क्षमा' का सुंदर नाम देकर फूले नहीं समाते। अपनी अकर्मण्यता एवं आलस्य का परिचय 'जो प्रभु कीन्हौं सो भल कर मान्यो, यह सुमति साधु से पाई' नानकजी का यह सुंदर पद गाकर देते हैं। जब अपनी कायरता को ढकना चाहते हैं तो 'नहि कोई बैरी, नहीं बेगाना, सबहि संग हमरी बन आई' यह कहकर संसार को धोखा देते हैं। हमारा अपरिग्रह 'वृद्धा नारी पवित्रता' की तरह रह गया है।"२११

उन्होंने धार्मिक-सामाजिक-व्यक्तिगत अंधविश्वास और इस देश के अधःपतन के कारणों को ढूंढ़ते हुए पाया, "हम अपनी अकर्मण्यता को संतोष, कायरता को अहिंसा, दरिद्रता को अपरिग्रह, भय को क्षमा, बाह्योपचारी रूढ़ियों को धर्म, अज्ञान को शांति, आलस्य को वृत्ति मान बैठे हैं और इसी में अपना गौरव समझते हैं।"२१२

स्वास्थ्य की दृष्टि से भारतीय समाज का घनश्यामदासजी ने काफी चिंतन-मनन किया था। उनके विचारानुसार—स्वास्थ्य की दृष्टि से परदा एक जंगली प्रथा है। हिंदू-संगठन की दृष्टि से परदा घातक है। यह तो किसी से छिपा नहीं है कि

२१०. बिखरे विचारों की भरौंटी, पृष्ठ ३५८-३५९
२११. वही, पृष्ठ २४४
२१२. वही, पृष्ठ २४५

युवावस्था में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां अधिक मरती हैं। मुसलमान स्त्रियों को हिंदू स्त्रियों की अपेक्षा संक्रामक रोग अधिक सताते हैं। कारण स्पष्ट है, जहां शुद्ध वायु और व्यायाम का अभाव हो, वहां स्वास्थ्य निभाना कठिन है।

प्राकृतिक चिकित्सा पर घनश्यामदासजी की खासी आस्था थी। उनका विचार था कि शरीर के भीतर एक 'उपचारक' है, जिससे हमारी जान-पहचान कम है। वह यद्यपि डाक्टरों और वैद्यों से कहीं अधिक प्रभावशाली और स्वयं-सिद्ध ज्ञानी है, पर, चूंकि हम उसे कम जानते हैं, इसलिए हम उसके पास न जाकर अक्सर वैद्य-हकीमों के दरवाजे खटखटाना ज्यादा पसंद करते हैं। वह 'उपचारक' विषजन्य चीजों को शरीर में प्रवेश करने से रोकता है, उनसे लड़कर उन्हें भस्मीभूत कर देता है, या उन्हें निकाल बाहर फेंकता है। उनकी दृष्टि से मानव-जीवन में निर्धारित एवं नियमित दिवा-रात्रि-चर्या का पालन आवश्यक है।

घनश्यामदासजी की दैनंदिनी-चर्या, उनके स्वस्थ जीवन का उदाहरण था। उनका स्वास्थ्य नियमित, संयमित एवं व्यवस्थित जीवन-यापन करने के कारण बहुत अच्छा रहा। उनका अभिमत था कि 'इलाज कराने से स्वास्थ्य की देखभाल करना ज्यादा बेहतर है।' वे प्रातः भ्रमण, भोजन, शयन एवं अन्य दैनिक कार्य नियत समय पर नियमित रूप से संपन्न करते थे। यही उनके अच्छे स्वास्थ्य एवं दीर्घायु का रहस्य था। उन्हें यदि कभी औषधोपचार की आवश्यकता अनुभव हुई तो उन्होंने कभी भी तीव्र औषधि नहीं ली। जब कभी यात्राओं में रहने के कारण उन्हें जुकाम, बुखार या पेट खराब होने की शिकायत हुई, तो उन्होंने या तो प्राकृतिक चिकित्सा का सहारा लिया या आयुर्वेदिक औषधियों का। इस प्रकार घनश्यामदासजी की प्राकृतिक चिकित्सा व देशी औषधोपचार में ही विशेष आस्था रही। स्वास्थ्य के संबंध में उनका कहना था कि *नियमित आहार-विहार से मनुष्य नीरोग रह सकता है। 'आपदाम् कथितः पंथा* इंद्रियाणाम असंयमः तज्जयः संपदा मार्गो येनेष्टं तेन गम्यताम्' अर्थात इंद्रियों की संयमहीनता ही आपत्तियों का मार्ग है और उनका संयम ही सुख-संपत्ति का।

फलों में उनको आम, पपीता विशेष प्रिय थे। सूखे फलों में अंजीर और खजूर विशेष रुचिकर और हितकर थे। उनका खान-पान सदैव सात्विक एवं शाकाहारी ही रहा है। गाजर, बीन, सलाद उनके भोजन के आवश्यक तत्त्व थे।

घनश्यामदासजी समय के पालन को अत्यधिक महत्त्व देते थे। वे अपनी घड़ी को इसलिए पंद्रह मिनट आगे रखते थे कि निर्धारित समय पर कार्य संपन्न हो सके। रात को उनके सोने जाने का समय नौ बजे था। लाख व्यस्तता हो, वे इस नियम का

पालन करने का प्रयत्न करते थे। एक बार मास्को में उन्नीस सौ अड़सठ में वे एक थियेटर में नाटक देखने के लिए आमंत्रित थे। जब नाटक का अभिनय चल रहा था, तभी रात को ८–४० बजे वे अपने होटल में जाने के लिए उठ खड़े हुए, ताकि नौ बजे बिस्तर पर जा सकें।

वे पर्वतीय स्थानों पर भ्रमणार्थ ऐसी ऋतु में जाते थे, जबकि पहाड़ों पर भीड़ कम रहती हो। वे प्रायः सितंबर-अक्तूबर के महीनों में पर्वतों पर भ्रमणार्थ जाते थे। इस दौरान एक प्रकार की स्वास्थ्यप्रद वायु चलती है। पर्वतीय स्थानों पर वे ऐसे मार्गों का भ्रमण करते थे, जहां शांत वातावरण और प्राकृतिक सौंदर्य हो।

पर्वतीय स्थलों में वे मसूरी को बहुत अधिक पसंद करते थे। युद्ध के दिनों में किसी समय उन्होंने मसूरी में एक जायदाद खरीद ली थी, जो किसी रियासत के राजा की थी। उन दिनों मसूरी में बहुत कम घरों तक कार द्वारा पहुंचा जा सकता था। घनश्यामदासजी ने अपनी दूरदर्शी दृष्टि से यह अनुमान लगा लिया था कि जिस जायदाद को उन्होंने खरीदा है, देर-सबेर वहां तक कार द्वारा पहुंचा जा सकेगा। उन्होंने उसी जमीन पर 'विलानुमा' एक भवन बनवाया। कालांतर में यह भवन ऐतिहासिक महत्त्व का हो गया, क्योंकि गांधीजी वहां एक या दो बार ठहरे थे। सरदार पटेल भी मसूरी के बिड़ला हाउस में ठहरे थे। जब गांधीजी वहां ठहरते थे तो उनसे मिलने आनेवाले अनेक नेताओं को भी वहीं ठहरने का अवसर मिला था। पंडित जवाहरलाल नेहरू वहां गांधीजी से मिलने आये थे और वे भी बिड़ला हाउस में ठहरे थे।

दलाई लामा जब तिब्बत से पलायन कर भारत आये थे, तब वे भी इसी बिड़ला हाउस में ठहरे थे।

मसूरी के बिड़ला हाउस में दलाई लामा के ठहरने की एक दिलचस्प कहानी है। जैसा कि सभी जानते हैं, दलाई लामा को अचानक तिब्बत छोड़कर भागना पड़ा था। उन्होंने भारत में शरण ली थी। जब वे भारत आये तो जवाहरलालजी ने पंडित गोविंद-वल्लभ पंत से कहा कि दलाई लामा के लिए अस्थायी तौर पर कहीं कोई उपयुक्त स्थान खोजा जाये। जांच-पड़ताल करने के बाद पंतजी ने पंडितजी को सूचना दी कि जब तक दलाई लामा के लिए किसी स्थायी निवास की व्यवस्था नहीं की जाती, तब तक उनके ठहरने के लिए मसूरी के बिड़ला हाउस से अच्छी जगह उन्हें नजर नहीं आती। पंडितजी ने पंतजी के इस सुझाव को मान लिया किंतु साथ ही यह भी कहा कि घनश्यामदासजी से मकान उपलब्ध कराने का अनुरोध तभी किया जाये, जब इस व्यवस्था से उन्हें कोई असुविधा न हो। तब पंतजी ने घनश्यामदासजी से बात की

और पूछा कि क्या वे अस्थायी तौर पर बिड़ला हाउस को दलाई लामा के ठहरने के लिए दे सकते हैं ? उस समय कृष्णकुमारजी की पत्नी मनोरमा देवी मसूरी में ठहरी हुई थीं। घनश्यामदासजी अपनी पुत्रवधू मनोरमा देवी का बहुत सम्मान करते थे। उन्होंने टेलीफोन पर उनसे बात की और उन्हें बताया कि पंडितजी के निर्देश पर पंतजी ने उनसे संपर्क किया है और पूछा है कि क्या हम दलाई लामा के लिए मसूरी का मकान उपलब्ध करा सकते हैं। घनश्यामदासजी ने मनोरमा देवी को यह भी बता दिया कि पंडितजी ने खास तौर पर यह संकेत किया है कि दलाई लामा के वहां ठहरने से हमारे परिवार के सदस्यों को कोई असुविधा नहीं होनी चाहिए। मनोरमा देवी ने उत्तर दिया कि अपनी निजी सुविधा अथवा असुविधा के बारे में सोचने-विचारने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। दलाई लामा ने भारत में शरण ली है और भारत सरकार ने भी उन्हें शरण देने के लिए आश्वस्त कर दिया है, इसलिए यह प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है कि वह सरकार के साथ सहयोग करे। दलाई लामा के लिए वे बड़ी खुशी से बिड़ला हाउस खाली कर देंगी। इस उत्तर से घनश्यामदासजी को अपनी पुत्रवधू पर बहुत गर्व हुआ और उन्होंने पंतजी के माध्यम से पंडितजी को उत्तर पहुंचा दिया। पंडितजी और पंतजी, दोनों उनके इस व्यवहार से बहुत प्रसन्न हुए।

दलाई लामा लगभग एक वर्ष मसूरी के बिड़ला हाउस में रहे। बिड़ला हाउस छोड़कर अपने स्थायी निवास धर्मशाला जाने के पूर्व उन्होंने कृष्णकुमार जी को आभार व्यक्त करते हुए एक पत्र लिखा था। दलाई लामा का मूल पत्र अगले पृष्ठ पर है, उसका हिंदी अनुवाद नीचे प्रस्तुत है :

बिड़ला हाउस
मसूरी
२९ अप्रैल १९६०

प्रिय श्री बिड़ला,

मसूरी छोड़कर अपने नये निवास-स्थान धर्मशाला को जाते समय मैं आपको और आपके समूचे परिवार को, अपनी ओर से और अपने दल के सदस्यों की ओर से, गत वर्ष जब मैं भारत आया था, आप द्वारा प्रदत्त उदार मेहमाननवाजी के लिए आभार प्रकट करता हूं। सचमुच समय तेजी से व्यतीत हो गया। मुझे तो लगता है जैसे दुखदायी परिस्थितियों में हम अभी-अभी तिब्बत से भागकर भारत आये हैं। वास्तविकता तो यह है कि हमें यहां आये एक वर्ष से अधिक हो गया और तब से हम प्राकृतिक सौंदर्य से आच्छादित आपके आकर्षक और आरामदेह मकान में रह रहे हैं।

आप और आपका परिवार हमारे लिए उदारता और दयालुता का उदाहरण है और जो कुछ आप सबने किया है उसके लिए धन्यवाद देने को हमारे पास पर्याप्त शब्द नहीं हैं। बहरहाल, हम आपके आतिथेय की स्मृतियों को हमेशा याद रखेंगे और आपको तथा आपके परिवार की समृद्धि और कुशलता की कामना करेंगे।

आदर सहित

श्री के० के० बिड़ला
मिठल हाउस
मसूरी

आपका स्नेही
हस्ता०
(दलाई लामा)

PERSONAL

Birla House
Mussoorie
29th April, 1960.

Dear Mr. Birla,

On the eve of my leaving Mussoorie for my new residence at Dharamsala, I wish to write and convey to you and to your family the deep gratitude of myself and the members of my party for the generous hospitality that you extended to us when we arrived in India last year. Time has passed very quickly indeed and it seems to be only such a short while ago that we arrived in India from Tibet under unhappy circumstances. It is, however, over a year now since we came and started living in your beautiful and comfortable House and surroundings. You and your family have been the very personification of kindness and generosity and we cannot adequately thank you for all that you have done for us. We shall, however, always cherish happy memories of your hospitality and shall always wish you and your family, the very best in life.

With kindest regards,

Yours sincerely,

DALAI LAMA

Shri K.K. Birla,
Mithal House,
Mussoorie.

थोड़े विषयांतर से, इस प्रसंग में एक विचित्र घटना का उल्लेख किया जा सकता है। सन उन्नीस सौ उनसठ में जब मसूरी का बिड़ला हाउस दलाई लामा को अस्थायी निवास के रूप में उपयोग करने के लिए सौंपा जा रहा था, तब सारी व्यवस्था की देखभाल और निरीक्षण के लिए मनोरमा देवी और गंगाप्रसादजी की पत्नी निर्मला देवी स्वयं वहां गयी थीं। उस समय वहां मौजूद विदेश मंत्रालय के एक अधिकारी ने उन दोनों के साथ अभद्र व्यवहार किया। उसने इतनी जोर से चिल्लाते हुए कि वहां उपस्थित सभी सुन सकें, कहा, कि ये दो औरतें कौन हैं? और इस समय वे क्यों मौजूद हैं? उसके इस व्यवहार से मनोरमा देवी और निर्मला देवी, दोनों ने स्वयं को बहुत अपमानित अनुभव किया और वे तत्काल वहां से चली गयीं। उन्होंने कृष्णकुमारजी को अपना यह अनुभव सुनाया। कृष्णकुमारजी पंतजी के बहुत निकट थे, जो उन्हें पुत्रवत मानते थे। घनश्यामदासजी से परामर्श के बाद कृष्णकुमारजी ने पंतजी को इस सारी घटना की जानकारी दी। पंतजी ने जब इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना के बारे में सुना तो वे गुस्से से आग-बबूला हो उठे। पंतजी प्रभावशाली ढंग से व्यंग्य करने में सिद्धहस्त थे। उन्होंने संबंधित अधिकारी को बुलवाया और शांति और सहजता से कुछ मुद्दों पर उससे चर्चा की। उन्होंने उक्त अधिकारी से इस घटना के बारे में एक भी शब्द नहीं कहा। कुछ समय बाद उस अधिकारी ने विदा ली और अपनी कार की ओर बढ़ा। पंतजी ने तत्काल अपने सचिव को उसे फिर बुलाने भेजा। पंतजी ने तीव्र व्यंग्य से उक्त अधिकारी को बताया कि उन्होंने सुना है कि विदेश मंत्रालय के एक अधिकारी ने कृष्णकुमारजी की पत्नी मनोरमा देवी और गंगाप्रसादजी की पत्नी निर्मला देवी के साथ अपमानजनक व्यवहार किया था, जब दलाई लामा के अस्थायी निवास के लिए वे अपना भवन सौंप रही थीं। पंतजी ने कहा कि अपनी असुविधाओं की उपेक्षा कर बिड़लाओं ने अल्प सूचना पर दलाई लामा के निवास के लिए अपना मकान भारत सरकार को सौंप दिया। उनका यह कार्य प्रशंसा योग्य था। कोई अधिकारी इतने नीचे कैसे गिर सकता है कि उसी घर की महिलाओं के साथ वह अपमानजनक व्यवहार करे। पंतजी ने जानबूझकर उक्त अधिकारी से स्पष्टीकरण की मांग नहीं की। उन्होंने केवल उस अधिकारी से कहा कि वह पता लगाये कि वह कौन अफसर था। उक्त अधिकारी ने अपने आपको बेहद शर्मिंदा महसूस किया। उस अधिकारी ने बाद में कृष्णकुमारजी को सूचित किया कि इस पूरे मामले में कहीं कोई गलतफहमी हो गयी है। इसके लिए वह शर्मिंदा है और क्षमा चाहता है।

घनश्यामदासजी की दृष्टि में सद्व्यय ही मनुष्य की सबसे बड़ी पूंजी है। उनकी

दृष्टि में "पैसा होना कोई बड़ी बात नहीं है। कलकत्ता के मारवाड़ी तो बस धन को ही बड़ा मानते हैं, बड़ा गड़बड़ है। मैंने अनुभव कर लिया है कि धन बड़ी चीज नहीं है। कला को सीखो, ज्ञान को अर्जित करो, भक्ति में मन को रमाओ।"२१३

सद्व्यय की इसी पूंजी से उनकी वह धर्म-चेतना विकसित हुई थी, जिसे सिर्फ 'दान' कहकर ही नहीं समझा जाना चाहिए। व्यावहारिक स्तर पर दान का यह भाव उनके कर्मयोग का अभिन्न था। इसी भावना के अधीन उन्होंने विभिन्न शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना की।

धन के सही उपयोग को ही लेकर घनश्यामदासजी के मन में, अंतिम दिनों में, यह बात उठी थी कि सभी महत्त्वपूर्ण एवं शास्त्रीय ग्रंथों के ऐसे संस्करण तैयार किये जाएं, जिनमें उचित व्याख्याएं हों और जिन्हें लोगों तक बहुत कम मूल्य में पहुंचाया जाये। पर अपने व्यावसायिक अनुभव से उन्होंने यह सीखा था कि मुफ्त में बांटने पर इन ग्रंथों से वह उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा, जो वे चाहते हैं। धर्म ग्रंथों पर उनकी अगाध श्रद्धा थी। बार-बार रामायण, भागवत और महाभारत पढ़ते थे। चिंतन-मनन करते थे और अपने ढंग से उनकी व्याख्याएं देते थे। इस संबंध में वह स्वामी चिन्मयानंद, स्वामी अखंडानंद जैसे विद्वानों से विचार-विमर्श करते थे। सन उन्नीस सौ पचपन में विनोबाजी को लिखे गये एक पत्र में उन्होंने ईशावास्योपनिषद् के सत्रहवें मंत्र की अपनी व्याख्या प्रस्तुत की है।

धन, व्यक्ति और समाज के संबंध में घनश्यामदासजी के विचार बहुत ही व्यावहारिक और सुचिंतित हैं। उनका विचार था कि मूल प्रश्न गरीबी को हटाने अथवा घटाने का नहीं, प्रश्न तो लोगों की पीड़ा मिटाने का है। जनसाधारण का स्तर ऊपर उठाना चाहिए, किंतु अज्ञानता और अंतर मिटाना कभी संभव नहीं होगा। अपने बारे में अपने सेवाभाव के अनुरूप कहा करते थे कि 'यदि मैं कहूं कि मैंने आदर्श और गुणों का ही पालन किया है तो यह मूर्खता होगी। मैं गुणी रहा या निर्गुणी, दोषी रहा या निर्दोष, इन बातों की चिंता तो लोग ही करेंगे, पर मुझे किसी प्रकार की निराशा अथवा ग्लानि नहीं है।'

धर्म के संस्कार, औद्योगिक उन्नति के बारे में उनके विचार, स्पष्ट और मानवीय थे, "धर्म का संस्कार और धर्म की शक्ति मनुष्य को कर्म के लिए प्रेरित करती है। गीता का धर्म तो कर्म है। कर्म-शिथिलता में धर्म की शिथिलता आना और कर्म के

२१३. रामनिवास जाजू के नोट्स से

अभाव में धर्म का लोप हो जाना एक अवश्यंभावी स्थिति बनती है। धर्म प्रेरणा और कर्म पथ है, तो व्यक्ति का रथ चलेगा ही। रथ के चलने में ही रथ और पथ का उद्धार है। रथ और पथ एक-दूसरे के पूरक हैं। व्यक्ति और कर्म का यह संबंध धर्म ने सदा स्थापित किया है। इस अर्थ में धर्म सबसे बड़ा बल है। यही सबसे बड़ी शक्ति है। बड़ी शक्ति के बिना बड़ा काम संभव नहीं। औद्योगिक उन्नति एक अनिवार्य काम है। इस अनिवार्य प्रगति के लिए धर्म की शक्ति का आधार भी अनिवार्य है। प्रगति से क्या प्राप्त है और प्राप्य का क्या प्रयोजन होगा, इसका सार-संदेश ही तो धर्म है। धर्म तो एक संपूर्ण प्रेरणा है।"२१४

घनश्यामदासजी के लिए 'उद्योग' में आवश्यकता थी 'विज्ञान' की। इस विज्ञान के दो निश्चित मत थे—एक उत्पादन-व्यवस्था का, दूसरा आर्थिक नियंत्रण का। इसी विज्ञान से उन्होंने अपने औद्योगिक क्षेत्र में 'पड़ता प्रणाली' का निर्माण किया था। उनकी 'पड़ता प्रणाली' में वित्तीय नियोजन, उत्पादन का कार्यक्रम, उपकरणों का सदुपयोग, भंडार का नियंत्रण, कच्चे माल की खरीद, बाजार में माल का वितरण, बाजार से उगाही, सभी का समावेश किया गया। इस प्रणाली के अंतर्गत यह पूर्णतः संभव था कि उत्पादन-प्रणाली को दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, वार्षिक और दीर्घ-कालीन कसौटी पर व्यावहारिक ढंग से कसा जा सके। घनश्यामदासजी यह आवश्यक मानते कि शीर्षस्थ स्थानों पर कार्यरत सभी महाप्रबंधक, बिड़ला बंधुओं के सदस्यों समेत, 'पड़ता प्रणाली' में माहिर हों, और इसे काम में लाएं। इसी प्रणाली की कसौटी पर वे अपने प्रबंधकों की क्षमता और योग्यता को कसते थे। इसी के आधार पर वे अपने उद्योगों में उत्पादन-व्यवस्था और आर्थिक नियंत्रण से आर्थिक अनुशासन कायम करते थे। उनके साथ काम करने वाले कई महत्त्वपूर्ण लोगों ने यह कहा है कि 'पड़ता प्रणाली' को यदि ताले की उपमा दी जाये तो उसकी चाबी का नाम है—'आर्थिक अनुशासन'।

घनश्यामदासजी का सदा यह आग्रह रहा, 'अछूते क्षेत्र में पहल करो, फायदे में रहोगे।' इसी विश्वास से उनका व्यावसायिक कर्म निरंतर बढ़ता रहा। स्थापित और सफल उद्योगों की शाखाओं की कलम से नये-नये उद्योगों की पौध पैदा करना उनकी अद्‌भुत प्रतिभा का प्रमाण है। वह इस सच्चाई को समझते थे कि औद्योगिकी के क्षेत्र में विस्तार की एक भौतिक सीमा होती है। हर उद्योग में एक सीमा तक पहुंचने के बाद

२१४. मरुभूमि का वह मेघ, पृष्ठ ३७१, ३७२

नये उद्योग स्थापित करना आवश्यक बन जाता है ।

उद्योग-क्षेत्र में कोई भी पहल करने के लिए वे बड़े-से-बड़ा जोखिम उठाने को तैयार रहते थे । उनका पक्का विश्वास था, 'नये काम की पहल ही, कमाई की पहल' ।

वे 'शुभस्य शीघ्रम' में विश्वास करते थे । विलंब उन्हें सहन नहीं था । वह कहा करते थे 'जिंदगी का क्या ठिकाना ? मैं चाहता हूं कि जो काम उठाया है उसे अपने जीते-जी पूरा देख लूं ।'

उनका मानना था कि उद्योग के विस्तार और विकास के दौर में खर्चों का कम और कमाई का ज्यादा हिसाब रखना चाहिए। पर, धन के प्रति आम पूंजीपति के मन में रहने वाला आकर्षण उनमें नहीं था। दुर्गाप्रसाद मंडेलिया के शब्दों में, "उत्पादन के काम में आवश्यक होने पर वह छोटे-से-छोटे या बड़े-से-बड़े खर्च को समभाव से लेते थे ।"

घनश्यामदासजी की दृष्टि में झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं था । बड़ी-से-बड़ी गलती करके कबूल कर लेनेवाला उनकी निगाह में छोटे-से-छोटे झूठ बोलने वाले से कहीं श्रेष्ठ था । वह अपने प्रबंधकों से कहा करते थे कि मतलब भर की बात सुनाओ, और बगैर कुछ छिपाये सुनाओ । हितकारी हो या अप्रिय हो, तब भी कहो । 'सबसे बुरी बात बताओ', हमेशा उनकी जबान पर रहा था ।

घनश्यामदासजी अपने परिजनों और औद्योगिक संस्थानों में कार्य करनेवाले अधिकारियों को समय-समय पर शिक्षा-रूप में कुछ परामर्श देते रहते थे :

—गलती से यदि शिक्षा ली जाये, तो वह वरदान बन जाती है, शिक्षा न ली, तो शाप बन जाती है ।

—मनुष्य कठिन श्रम करने से कभी नहीं मरता । उसके स्वास्थ्य को बिगाड़ती हैं उसकी अनियमित आदतें और व्यायाम का अभाव आदि ।

—अनिवार्य (आवश्यक) और अननिवार्य (अनावश्यक) में अंतर रखना चाहिए ।

—दैनिक कार्य दैनिक ही समाप्त करना चाहिए और किसी भी काम को अधूरा नहीं छोड़ना चाहिए । जो काम आज किया जा सकता है उसे कल पर नहीं टालना चाहिए ।

—जो व्यक्ति यह समझता है कि वह सब कुछ जानता है, वस्तुतः वह सबसे कम जानता है ।

—परोपकार करने का कोई अवसर हाथ से न जाने देना चाहिए।

—वास्तविक मानसिक आनंद तो देने में मिलता है, न कि लेने में।

—जीवन एक अथाह सागर है, उसका मंथन करो और उससे जितना सीख सकते हो, सीखो।

—बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुध लेहु—काम बिगड़ जाने पर उसके लिए चिंता मत करो। अतीत को भूल जाओ, भविष्य का ज्ञान रखो। आगे कैसे सुधरे, इसका ख्याल रखो।

—'सत्यंवद, प्रियंवद'। किसी से कड़वे वचन एवं उद्वेगकर वचन मत बोलो। वाणी में शहद की तरह मिठास होनी चाहिए।

—गलती करना मनुष्य का स्वभाव है और क्षमा करना दिव्यात्माओं का।

—आत्मविश्वास एक अद्‌भुत एवं अनुपम शक्ति है, जिसके बल से हम अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

व्यापार संबंधी कार्यकलापों में घनश्यामदासजी परिणाम को महत्त्व देते थे। यदि उद्योग है तो उसमें उत्पादन बढ़ना चाहिए। यदि व्यापार है, तो उसमें उचित लाभ होना चाहिए। इस लक्ष्य के मार्ग से 'क्यों', 'कैसे' सुनने से उन्हें कोई मतलब नहीं था। वे स्पष्ट कहते थे, 'मुझे तो परिणाम चाहिए, बहाना नहीं।'

जो प्रबंधक उनसे यह कहता कि 'मैं बहुत व्यस्त ही रहता हूं', उसे वह अकुशल बताते थे। उनकी दृष्टि में कुशल प्रबंधक वह है, जो अपने अधीनस्थ कर्मचारियों से सुचारु रूप से काम लेता है। उन्हें अपने कुछ अधिकार सौंप देता है और सारे काम को विधिवत व्यवस्थित कर देता है। उसके पास स्वयं करने के लिए कोई काम नहीं होना चाहिए, उसके पास इतना उपयुक्त समय होना चाहिए कि वह उद्योग या व्यापार के बारे में सोच सके, उसे अच्छे ढंग से संगठित कर सके और उसके विकास के लिए योजना बना सके। कोई मिल या उद्योग ठीक तरह से संगठित है या नहीं, इसके लिए घनश्यामदासजी की कसौटी यह थी कि प्रबंधक चाहे प्रधान कार्यालय में रहे या उस स्थान से कहीं बाहर गया हो, उद्योग का काम यथावत् चलता रहे।

वे जब भी कोई नया उद्योग प्रारंभ करते, तब पहले उसकी लंबे समय की पूरी योजना तैयार कर लेते। जिस किसी भी काम को वे हाथ में लेते, उससे संबंधित छोटी-से-छोटी बात की जानकारी और आंकड़े प्राप्त कर लेते। अपने अधिकारियों को हर समय काम में तत्पर और चुस्त रखने का उनका तरीका यह था कि उनके

काम की नियमित रिपोर्ट मंगवाते। इन सभी रिपोर्टों और 'पड़ताओं' को व्यवस्थित रूप से फाइलों में रख दिया जाता। घनश्यामदासजी नियमित रूप से उनका अध्ययन करते और अधिकारियों को तदनुसार उचित निर्देश देते रहते।

कार्यालय की चिट्ठी-पत्री अपनी निश्चित फाइल में रखी मिलनी चाहिए। व्यक्तिगत पत्रों की भी फाइलें रखना उनके नियम के अंतर्गत था। पत्रों का उत्तर यथासंभव उसी दिन दे देने में उन्हें संतोष मिलता। उद्योगों के उत्पादन, व्यय, लाभ-हानि, कुशलता आदि से संबंधित मासिक तुलनात्मक आंकड़े नियमित रूप से मंगाते और उन्हें व्यवस्थित ढंग से रखवाते। इन आंकड़ों और चार्टों पर दृष्टिपात करते ही वे अपने उद्योगों की कार्यस्थिति का जायजा ले लेते। अपने कार्यकुशल कर्मचारियों तथा अधिकारियों को वेतन-वृद्धि तथा बोनस देकर पुरस्कृत करते रहते। किसी कर्मचारी को एक बार नियुक्त कर लेने के उपरांत उसे यथासंभव सेवा से नहीं निकालते।

घनश्यामदासजी अपने परिवार की नयी पीढ़ी में अच्छे संस्कार डालने के लिए सदा प्रयत्नशील रहे। 'एक दिन सबेरे पुत्रवधू का कलकत्ता से टेलीफोन आया कि पौत्र का आज जन्मदिन है, आशीर्वाद दीजिए।' तो घनश्यामदासजी ने कहा—"लड़के को दान करना सिखाओ। उसको पैसे दो और कुछ दान करने को कहो। और लोग बच्चों को सब-कुछ सिखाएंगे, परंतु दान करना नहीं सिखाएंगे।" परिवार के बच्चे अच्छे संस्कारी हों, वे चरित्रवान बनें, इसके लिए वे सदा ही जाग्रत रहे हैं।२१५

उन्होंने सफल जीवन के लिए ईमानदारी को अनिवार्य माना है। उनका विश्वास था, "'सांच बराबर तप नहीं' यह कहावत सोलह आने सत्य है। धर्म की दृष्टि से जाने दीजिए, व्यावहारिक दृष्टि से भी सचाई से बढ़कर सफल जीवन की दूसरी चाबी मुझे नजर नहीं आती। धर्म न सही, बतौर नीति भी सचाई परमावश्यक गुण है। मेरा अनुभव है कि धर्म और व्यवहार दोनों के लिए सचाई से बढ़कर कोई अच्छी दवा नहीं है। सचाई से व्यापार में सफलता मिलती है। बुद्धि कुशाग्र होती है, आदमी ठगा जाने से बचता है और सैकड़ों आफतों को बिना परिश्रम के पार कर जाता है।"

अपने विचार और आचरण दोनों में वे सदा एक थे। उनका विश्वास था कि लाभ एक जलराशि है, विकास करना है तो उसे जलधारा बनाओ। मुनाफे से धन-

२१५. मणि बेन वल्लभ भाई पटेल, माडर्न इंडिया हेरीटेज एंड एचीवमेंट, पृष्ठ १४७

संचय करना तो मात्र सेठाई का रूप है। सच्ची कीर्ति तभी अर्जित की जा सकती है, जब अर्जित लाभ एक जनकल्याणकारी जलधारा बने ।

मानवीय व्यवहार से यंत्र को बिलकुल निर्वासित करने से सारी विपत्तियां दूर होंगी, यह विचार घनश्यामदासजी के लिए श्रद्धा के योग्य नहीं था। दो हाथ प्राप्त करने के बाद मनुष्य ने जब भी यंत्र की मदद से अपनी कर्म-शक्ति को बढ़ाया, तब वह जीवन-पथ पर विजय की ओर अग्रसर हुआ है। इस कर्म-शक्ति का अभाव ही पशुत्व है, इसकी पूर्णता मनुष्यत्व है। उनकी दृष्टि से कर्म-शक्ति के वाहन पर जो देश अधिकार नहीं कर पाता, उसकी पराजय उतनी ही अनिवार्य है, जितनी कि मनुष्य के हाथों पशु की पराजय ।

शक्ति संकुचित न होने पाये, साथ-ही-साथ शक्ति के संगठन से मनुष्य पर किसी प्रकार आघात भी न हो, इन दोनों बातों का सामंजस्य कैसे हो और इस कसौटी पर जीवन कैसे जिया जाये, इसी का प्रत्यक्ष प्रमाण है घनश्यामदासजी का जीवन-दर्शन ।

चारित्रिक विशेषताएं

घनश्यामदासजी के संबंध में इतना सब कुछ पढ़ लेने के बाद समूची तस्वीर स्पष्ट हो जाती है। वे कर्मशील और उद्योगी पुरुष रहे हैं। जो सपना उन्होंने अपनी बाल्यावस्था में देखा था, अपने जीवन-काल में उसे साकार भी किया। इस दृष्टि से उनका जीवन-चरित्र प्रेरणादायी और आने वाली पीढ़ियों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगा। वे सच्चे अर्थों में भारतीय थे और उन्होंने यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया था।

घनश्यामदासजी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। एक ओर यदि वे सफल उद्योगपति थे तो दूसरी ओर उनके सांस्कृतिक और साहित्यिक रूप भी सामने आते हैं। वे एक कुशल लेखक के रूप में, चित्रकार के रूप में, संगीत-मर्मज्ञ के रूप में और एक जिज्ञासु यायावर के रूप में सदैव याद किये जाएंगे।

घनश्यामदासजी ने किसी दूसरे के बताये पथ का अनुसरण नहीं किया बल्कि वे स्वयं अपने पथ-प्रदर्शक थे। इसीलिए वे कहते रहे हैं कि मेरा कोई गुरु नहीं है। उन्होंने दूसरों को भी यही उपदेश दिया कि 'अपने गुरु आप बनो'। जो व्यक्ति अपना रास्ता अपने आप बनाता है, वह संघर्ष की शक्ति को पहचानता है। इससे जो व्यक्तित्व बनता है, वह अपेक्षाकृत अधिक कर्मठ एवं प्रेरणास्पद होता है।

घनश्यामदासजी ने कदम तो रखा था उद्योग और व्यापार के क्षेत्र में किंतु वे भारतीय संस्कृति और भारतीय समाज के प्रतीक बन गये। उद्योग का क्षेत्र नितांत नीरस होता है। वहां बंधन है और कार्य-संचालन की यंत्रवत् पद्धति है तो उसके बाहर की दुनिया अधिक उदार और रसमय होती है। घनश्यामदासजी के जीवन की विशेषता यही रही है कि उन्होंने इन दोनों में सामंजस्य स्थापित किया—एक ओर अपने कार्य-संचालन में अपनी दृढ़ क्षमता का परिचय दिया तो दूसरी ओर एक सांस्कृतिक परिवेश में खड़े होकर अपने जीवन को ही सरस नहीं बनाया बल्कि दूसरों के लिए भी एक

उदाहरण छोड़ गये। उनका 'मनुष्यत्व' बहुत प्रबल था और उसने यह स्पष्ट कर दिया कि ऐसे 'मनुष्य' की प्रबल शक्ति को कोई भी जड़ता अवरुद्ध नहीं कर सकती। इसी से उस व्यक्ति का मन सुस्थिर, शांत और निरापद बनता है। वह अपने क्षेत्र का शासक होता है। राष्ट्रकवि माखनलाल चतुर्वेदी के शब्दों में :

दृष्टि क्षेत्र का मैं राजा हूं
सब पर है मेरा अधिकार
नहीं किसी का शासन मुझ पर
करता हूं स्वच्छंद विहार

घनश्यामदासजी जैसे-जैसे सफलता पाते गये, वैसे-वैसे अधिक उदार और दूरदर्शी बनते गये। उनका जीवन एक ओर पूरी तरह भारतीय था तो दूसरी ओर पाश्चात्य सभ्यता की अच्छाइयों से उन्हें कोई परहेज भी नहीं था। उन्होंने यहां भी अनुकरण नहीं किया बल्कि अपने अंतःकरण से अपने जीवन को संतुलित रखा। निर्भीकता, सत्यनिष्ठा और आत्म-निर्भरता की दृष्टि से उनकी तुलना महान पुरुषों में की जा सकती है। जिस निर्भीकता के साथ उन्होंने भारतीय समाज की जड़ता पर चोट की, उतने ही तीव्र ढंग से उन्होंने पाश्चात्य जगत के यांत्रिक जीवन की निंदा भी की। उन्होंने देखा कि पाश्चात्य जगत के जीवन में दिव्य-जीवन की झांकी नहीं है। इससे उनके देश-प्रेम का परिचय मिलता है।

घनश्यामदासजी को प्रकृति से एक विशेष गुण मिला था—वह था विनम्रता। अनेक उपलब्धियों के बाद वे कहा करते थे, 'मुझसे सब अच्छे हैं।' यह उनके जीवन का एक पक्ष था तो दूसरा पक्ष यह था कि वे किसी के सामने न झुककर चल सकते थे और न किसी प्रकार का अनादर अथवा अपमान सहन कर सकते थे। उन्होंने लाभ की आशा से कभी किसी की खुशामद नहीं की। उनके जीवन के ये महत्त्वपूर्ण गुण आज भी समूचे बिड़ला-परिवार में देखने को मिलते हैं।

यह सुखद आश्चर्य की बात है कि व्यक्ति-परक और चिंतक होते हुए भी घनश्यामदासजी संयुक्त कुटुंब के साथ बंधे रहे। उनके परिवार में चार भाई और तीन बहनें थीं लेकिन यह संयुक्त कुटुंब भी उनके व्यक्तित्व को दबा नहीं सका। बल्कि घनश्यामदासजी के व्यक्तित्व ने समूचे कुटुंब को प्रेरणा दी। वास्तव में घनश्यामदासजी स्वभावतः विनम्र और निरहंकारी थे। वे समान भाव से सभी से मिलते थे और कोई छोटा हो या बड़ा, उसे आदरपूर्ण सद्व्यवहार देते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि

उन्हें भी सभी लोगों से भरपूर आदर मिला और वे सबके प्रियपात्र बने।

घनश्यामदासजी स्पष्टवादी थे। अप्रसन्न या असंतुष्ट होने के डर से वे स्पष्ट बात कहने में कदापि संकोच नहीं करते थे। वे यथार्थवादी भी थे और उन्हें भले-बुरे की पहचान थी। जिस व्यक्ति का आचरण सुसंस्कृत नहीं होता था, वह कभी उनकी प्रतिष्ठा का पात्र नहीं बन सका।

घनश्यामदासजी में एक और विशेषता थी कि वे कर्मठ और गुणी व्यक्ति से ही प्रभावित होते थे। महात्मा गांधी उनके लिए पूज्य पुरुष थे तो महामना मदनमोहन मालवीय, सरदार पटेल, ठक्कर बापा, महादेव देसाई, जमनालाल बजाज और जवाहरलाल नेहरू श्रद्धास्पद थे। उनके प्रिय पात्रों में हीरा, नाहरसिंह, बाबा खिचड़ीदास जैसे चरित्रों के नाम गिनाये जा सकते हैं।

घनश्यामदासजी की माता योगेश्वरी देवी यशस्वी महिला थीं। उनका एक चित्र पिलानी की पुरानी हवेली के संग्रहालय में रखा हुआ है। उनकी एक मूर्ति पिलानी के ही शारदा मंदिर के प्रांगण में स्थापित है। इस सौम्य मूर्ति को देखकर यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि वही घनश्यामदासजी की कर्मसाधना के लिए प्रेरक रही होंगी।

घनश्यामदासजी ने अपने जीवन में प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष किया और अंततः उन पर विजय प्राप्त की। बचपन से ही उनके संघर्ष का क्रम आरंभ हो जाता है। पिलानी जैसे छोटे-से गांव में विद्यार्जन कठिन कार्य था। उस समय वहां शिक्षा-दीक्षा के लिए अच्छी पाठशालाओं का प्रबंध नहीं था। इसलिए बारह वर्ष की आयु में उन्होंने स्कूल जाना छोड़ दिया और अपने खानदानी कारोबार में हाथ बंटाने लगे। इसके बावजूद उनके मन में ज्ञान की अमिट भूख थी और उसे पूरा करने के लिए वे निरंतर कुछ-न-कुछ पढ़ते रहे। उन्होंने स्वयं लिखा है, "पर मुझे विद्या से लगन थी, इसलिए स्कूल छोड़ने के बाद भी मैं अपनी शिक्षा स्वयं चलाता रहा। न मालूम क्यों, मुझे किसी अध्यापक द्वारा पढ़ने से चिढ़ थी। इसलिए स्कूल छोड़ने के बाद पुस्तकों और अखबार के अलावा एक शब्दकोश और कापी-बुक ही मेरे अध्यापक रहे। इसी ढंग से मैंने अंग्रेजी, संस्कृत, एक-दो दूसरी भारतीय भाषाएं, इतिहास और अर्थशास्त्र सीखे और काफी जीवनियां तथा यात्रा के विवरण भी पढ़ डाले। मेरा यह मर्ज आज भी ज्यों-का-त्यों बना हुआ है।"[२१६]

इस पठन-पाठन से ही घनश्यामदासजी को देश की राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए

---

२१६. गांधीजी की छत्रछाया में, पृष्ठ १११

कार्य करने और उस समय के राजनीतिक नेताओं से संपर्क स्थापित करने का लोभ पैदा हुआ। उन दिनों रूस-जापान-युद्ध से एशियाई प्रजा में एक जोश लहराने लगा था। उससे भारत भी अछूता नहीं रह सका। एक बालक के रूप में घनश्यामदासजी की सहानुभूति पूरी तरह जापान के साथ थी, और भारत को स्वतंत्र देखने की लालसा उनके मन को उद्वेलित करने लगी। वे गांधीजी के संपर्क में आये। तब घनश्यामदासजी को यह विश्वास हुआ कि 'कृपालु प्रारब्ध ही मुझे उनके पास ले गया।'

सोलह वर्ष की आयु में ही उन्होंने एक छोटा-सा स्वतंत्र व्यवसाय शुरू कर दिया था। उसके कारण वे अंग्रेजों के संपर्क में आये। उनके संपर्क में आने पर उन्होंने अनुभव किया कि अंग्रेजों में संगठन संबंधी क्षमता है, किंतु उन्होंने यह भी अनुभव किया कि वे भारतीयों के साथ भेद बरतते हैं। एक दृष्टांत उन्होंने स्वयं लिखा है, "उनके दफ्तरों में जाने के लिए मुझे लिफ्ट का इस्तेमाल नहीं करने दिया जाता था, न उनसे मिलने के लिए प्रतीक्षा करते समय उनकी बेंचों पर ही बैठने दिया जाता था। इस प्रकार के तिरस्कार से मैं तिलमिला उठता था और सच पूछिए तो इसी ने मेरे भीतर राजनीतिक अभिरुचि जाग्रत की, जिसे मैंने सन उन्नीस सौ बारह से लेकर आज तक उसी प्रकार बनाये रखा। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक और गोखले को छोड़कर ऐसा कोई राजनीतिक नेता नहीं हुआ, जिससे मेरा संपर्क न रहा हो। न देश में ऐसा कोई राजनीतिक आंदोलन ही हुआ, जिसमें मैंने गहरी दिलचस्पी न ली हो और जिसमें मैंने अपने ढंग से सहायता करने की चेष्टा न की हो।"२१७

उस समय भारत में कई लोग अंग्रेजों का अनुग्रह-लाभ प्राप्त करना चाहते थे, लेकिन घनश्यामदासजी ने किसी प्रकार के अनुग्रह-लाभ के लिए बड़े-से-बड़े अंग्रेजों के सामने कभी सिर नहीं झुकाया। इस प्रसंग में उनका एक 'व्यक्तिगत स्पष्टीकरण' उल्लेखनीय है :

"उन्नीस सौ चालीस के अंत में लार्ड लिनलिथगो के साथ मेरा खासा झगड़ा हो गया। मैं इस प्रसंग का केवल इसीलिए जिक्र कर रहा हूं कि उस समय के मेरे अपने कार्यकलाप के बारे में प्रचलित धारणा से उसका घनिष्ठ संबंध है। सीधी-सादी भाषा में लोगों की धारणा थी कि मैं अपने आपको कांग्रेसवादी तो नहीं कहता हूं, पर उसे गुप्त रूप से खूब पैसे दे देता हूं, और इस प्रकार दो किश्तियों पर सवार हूं।... कह नहीं सकता कि कुछ लोग मुझे शंका का लाभ देते थे या नहीं और यह मानते थे या नहीं कि मैं कांग्रेस का समर्थन देश-भक्ति की भावना से प्रेरित होकर ही करता हूं।

२१७. मेरे जीवन में गांधीजी, पृष्ठ ११२

जब मैं सर गिलबर्ट लेथवेट के साथ अपनी अंतिम मुलाकात का विवरण फिर से पढ़ता हूं तो यह सोचने को मन कहता है कि वह और वाइसराय दोनों ही मेरे इस कार्य को देश-भक्ति से प्रेरित मानते थे। और उसमें कोई बुराई नहीं देखते थे।··· चूंकि उनका विश्वास था कि मैं कांग्रेस की आर्थिक सहायता कर रहा हूं, इसलिए वाइसराय सार्वजनिक रूप से मेरे साथ घनिष्ठ संबंध रखने में कठिनाई का अनुभव करते थे, क्योंकि उधर वह कांग्रेसवादियों को जेल भेज रहे थे। इसका यह लाजिमी मतलब नहीं कि उन्हें मेरा या उन लोगों का, जिन्हें वह जेल भेजने को बाध्य होते थे और जिनके साथ संघर्ष समाप्त हो जाने के बाद सामान्य मधुर संबंध कायम करने को वह तैयार हो जाते, लिहाज था। पर मैं भड़क उठा और मुझे क्रोध आया, क्योंकि मुझे लगा कि कम-से-कम उन्हें पता होना चाहिए था कि मैं कांग्रेस के 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' को आर्थिक सहायता नहीं दे रहा हूं। मेरी भक्ति बापू के प्रति थी और मैं उन्हें किसी चीज के लिए इंकार नहीं कर सकता था।··· मैं मित्र की हैसियत से ही तो कुछ असर डाल सकता हूं और अब चूंकि मुझे मित्र नहीं समझा जा रहा है, इसलिए आगे बात चलाने की मेरी इच्छा नहीं है।··· उन्होंने फिर मुझे ठंडा करने की कोशिश की।···मैंने कह दिया कि वाइसराय की ओर से यह प्रसाद पाने के बाद वाइसराय भवन में फिर पांव रखने की मेरी इच्छा नहीं है और उसके साथ मेरी बातचीत का यह बिलकुल अंतिम अध्याय है।''[२१८]

घनश्यामदासजी ने शुरू से ही यह चाहा कि भारत आत्मनिर्भर और मजबूत बने, इसी दृष्टि से उन्होंने उद्योगों का आरंभ किया। इस क्षेत्र में न केवल परंपरागत उद्योग प्रारंभ किये, किंतु उन्होंने अन्य आधारभूत उद्योगों की भी स्थापना की। उन्होंने कृषि-उत्पादन को भी उन्नत बनाने का प्रयास किया। पिलानी में एक कृषि-फार्म खोलकर उन्होंने फल, सब्जियां और फसलें पैदा कीं। उन्होंने फलों और सब्जियों के बीज यूरोप से मंगाये। इन बीजों के उत्पादन के लिए उन्होंने 'हौट हाउसेस' भी बनाये। हृदय से वे क्रांतिकारी थे। वास्तव में वे समाज को बदलना चाहते थे। प्रारंभिक जीवन में उन्होंने बंगाल के क्रांतिकारी दल को आर्थिक सहायता प्रदान की, जिसके सदस्य ब्रिटिश आर्डिनेंस डिपो से अस्त्रों और शस्त्रों की डकैतियां किया करते थे। उसके लिए आयुक्त श्री ट्रेगर द्वारा उनके विरुद्ध गिरफ्तारी का वारंट जारी किया गया, जिस कारण श्री बिड़ला को कई महीनों तक भूमिगत रहना पड़ा। बाद में घनश्यामदासजी के बारे में अधिक जानकारी मिलने पर ट्रेगर उनके

२१८. मेरे जीवन में गांधीजी, पृष्ठ ४२५-४२८

घनिष्ठ मित्र हो गये और जब वे रिटायर हुए तो लंदन में बिड़ला कंपनी के प्रथम अध्यक्ष हुए।२१९

घनश्यामदासजी नहीं चाहते थे कि भारत किसी भी तरह विदेशी नियंत्रण में रहे। पहले सभी जूट मिल स्काटलैंड के उद्योगपतियों द्वारा स्थापित थीं और उन्हीं के द्वारा उन्हें वित्तीय साधन उपलब्ध कराये गये। घनश्यामदासजी नहीं चाहते थे कि बंगाल 'स्काचमैन' की प्रभुता के अधीन रहे, क्योंकि बंगाल में जूट उद्योग एक आधारभूत उद्योग था। इसलिए उन्होंने जूट मिल प्रारंभ करने का निर्णय लिया। उनके मार्ग में अनेक बाधाएं खड़ी की गयीं। फिर भी वे लगे रहे और उन्होंने जूट मिल प्रारंभ कर दी। स्काचमैन को उसका प्रभारी बनाया। घनश्यामदासजी नहीं चाहते थे कि स्काचमैन पूरे समय वहीं रहें। ज्वालाप्रसाद मंडेलिया तथा दुर्गाप्रसाद मंडेलिया ने जैसे ही जूट मिल चलाने के काम में प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त कर लिया, घनश्यामदासजी ने स्काचमैन को पूरी पेंशन के साथ सेवा-निवृत्त कर दिया। इस प्रकार का पूर्वानुमानित खतरा घनश्यामदासजी सहर्ष ले सकते थे।

घनश्यामदासजी के चरित्र का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है--विशुद्ध सेवा भाव। इसके लिए अनेक बार सुदीर्घ कर्म-प्रणाली पर चलना होता है। घनश्यामदासजी की जीवन-यात्रा इसी सुदीर्घ कर्म-प्रणाली पर बराबर चलते रहने का महत्त्वपूर्ण उदाहरण है।

गांधीजी के विचारों को अंग्रेजों के समक्ष और अंग्रेजों के विचारों को गांधीजी के समक्ष आत्मविश्वास के साथ घनश्यामदासजी ने प्रस्तुत किया। यह वे इसलिए कर सके क्योंकि गांधीजी के प्रति उनके मन में विशुद्ध सेवा-भावना थी। दया के साथ यदि साहस का योग न हो और यदि सेवा के साथ निःशंक भक्ति नहीं है, तो सेवा का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। घनश्यामदासजी का जीवन-चरित इसी सत्य का सिद्धांत है।

उनके समस्त व्यक्तित्व में एक अद्‌भुत आत्मीयता मिलती है। "उन्हें विषय-वासना और बेजान चीजों से कोई लगाव नहीं था। वे अच्छों से मिलना चाहते थे और उनसे परिचय करना उनको पसंद था। बड़े आदमियों से मिलने का उन्हें शौक था, ताकि बड़े लोगों से वे गुण ले सकें२२०।" गुणवत्ता और सरलता, उनके चरित्र का एक विशेष पक्ष था। इससे उनकी दृढ़-शक्ति का परिचय मिलता है। आडंबर

२१९. दुर्गाप्रसाद मंडेलिया, हिंडालको संदेश, अप्रैल-मई अंक १९८४, पृ. २
२२०. दुर्गाप्रसाद मंडेलिया से साक्षात्कार

से उन्हें चिढ़ थी। उनका यह मानना था कि आडंबर के कारण ही लोग काम नहीं करते। कुछ आरंभ तो करते हैं परंतु पूरा नहीं कर पाते। प्रत्येक काम में दूसरों पर निर्भर रहना गलत है। इसी तरह दूसरों की त्रुटियों को बढ़ा-चढ़ाकर बताना भी बुरा है। इस तरह दुर्बलता, कर्महीनता और दंभ के प्रति घनश्यामदासजी के मन में तिरस्कार था।

घनश्यामदासजी के लिए निष्ठा और सच्चाई —ये दो बुनियादी तत्त्व थे, उन्हीं से उनका चरित्र निर्मित हुआ। इन्हीं दोनों तत्त्वों की कसौटी पर वे अपने लोगों को कसते रहते थे।

वे जब भी किसी को ऊंचे पद के लिए तैयार करते थे, तो पहले उसकी 'ईमानदारी' और 'विश्वासपात्रता' को देखते थे। चरित्र के साथ सच्चाई, खान-पान, उठना-बैठना इनमें से अगर कुछ भी बिगड़ेगा तो निश्चित रूप से उसके चरित्र पर कुप्रभाव पड़ेगा। उनके सहयोगी विश्वासपात्र दुर्गाप्रसाद मंडेलिया के शब्दों में, "यदि बाबू किसी के काम से नाराज होते थे तो बड़े प्यार से समझाते थे कि ऐसा नहीं करना चाहिए। क्यों नहीं करना चाहिए, यह भी बताते थे। कभी वे उग्रता से नाराज नहीं हुए। जिस आदमी को समझ लेते थे कि यह आदमी काम का नहीं है, उससे फिर काम नहीं लेते थे। जो आदमी काम का नहीं है, उसके लिए समय बर्बाद कौन करे? मिलते भी वे ऐसे ही लोगों से जो उनकी रुचि के होते थे। उन्हीं के साथ बैठते और आत्मीय बातें करते थे। जिसके साथ उनके विचार नहीं मिलते थे, उनसे नहीं मिलते थे।"२२१

घनश्यामदासजी अपने कर्मयोग में ऐसी चेतना-भूमि पर पहुंचे थे, जहां नियम-ही-नियम थे। उपनिषद् ज्ञान से उन्होंने यह समझ लिया था कि नियम और समय की गूढ़ शक्ति केवल वैज्ञानिक ही नहीं जान पाये हैं, बल्कि तपोवन के ऋषियों ने नियम और समय के रहस्य को अधिक समझा है। घनश्यामदासजी अपने जीवन में यह चरितार्थ करते थे कि नियम के बीच आनंद अपने आपको प्रकाशित करता है। यह बात नहीं कि उनके लिए नियम का बंधन नहीं होता, लेकिन वह आनंद का ही बंधन है। इसी में से उन्हें यह ज्ञान प्राप्त हुआ था कि मनुष्य में यह जो जीवन का आनंद है, वह वस्तुतः कर्म का आनंद है।

तत्काल निर्णय लेने की घनश्यामदासजी में अद्‌भुत क्षमता थी। कोई उनके सामने

२२१. दुर्गाप्रसाद मंडेलिया से साक्षात्कार

कैसी भी समस्या रखता, वह तत्काल समस्या की जड़ में चले जाते। समस्या के यथार्थ को पकड़कर तदनुसार निश्चित निर्णय लेने में वे जरा भी विलंब नहीं करते थे। इसी तरह कोई भी उन्हें पत्र लिखता, तो उसका उत्तर वे तत्काल देते, ऐसा उनका नियम था।

वे जो कुछ भी करते, उसमें शत-प्रतिशत सफलता की आशा करते। उन्हें सदा प्रथम कोटि की चीजें पसंद थीं---चाहे वह कोई पदार्थ हो, काम हो या कोई व्यक्ति हो। द्वितीय कोटि की उनकी पसंद नहीं थी---चाहे वह उद्योग हो, कोई व्यवसाय हो, रहन-सहन हो या भोजन-वस्त्र हो। उनका अटूट विश्वास था कि चौबीस घंटे कर्म की साधना में सफल होने के लिए यह परमावश्यक है कि अपने आपको निरंतर कठोर अनुशासन में रखा जाये और समस्त कार्य-व्यापार को नियमानुसार संपादित किया जाये। जो दिनचर्या उन्होंने अपने लिए तय कर ली थी उसका जीवनपर्यंत पूरी कठोरता के साथ पालन करते रहे।

घनश्यामदासजी का प्रिय 'बेयरा' था---पदम। वह लगातार उनकी सेवा में तीस वर्ष तक रहा। उसके अनुसार जाड़ों में सुबह साढ़े चार बजे और गर्मियों में सुबह चार बजे उठ जाना 'बाबू' का नियम था। उठते ही दाढ़ी बनाना, हाथ-मुंह धोना और यूरोपियन ढंग से स्नान करना और तैयार होकर पौने पांच बजे घूमने निकल जाना। वे घंटा, डेढ़-घंटा बाहर घूमते, फिर बंगले में आकर आधे घंटे तक घूमते। सैर के बाद वे चाय पीते, जिसे आमतौर पर वे खुद ही बनाना पसंद करते। अगर खुद न भी बनाते तो अपनी देख-रेख में बनवाते। चाय की पत्ती 'जयश्रीटी' की होती। चाय केवल दो कप पीते। फिर पैंतालीस मिनट का समय देश-विदेश के प्रमुख अखबारों पर नजर मारने का होता। आठ बजे तक नाश्ते की मेज पर आ जाते। सुबह का नाश्ता और दिन का लंच वे प्राय: पश्चिमी ढंग का लिया करते। नाश्ते में मूली, गाजर और गांठ-गोभी कच्ची काटकर रखी जाती, खजूर और संतरे रखे जाते, मौसम के अन्य फल और सब्जियां भी। प्राय: इडली, डोसा भी।

ब्रेकफास्ट टेबल पर आध घंटे तक परिवारवालों से बातचीत करके और गर्म काफी पीकर वे बैठक में चले जाते। वहां पत्र-पत्रिकाएं उलटते-पलटते और जिन लोगों को समय दे रखा होता, उनसे बातचीत करते। साथ ही वे फोन पर अपने वरिष्ठ प्रबंधकों से संपर्क करते। फिर उठकर कमरे से बाहर बरामदे में जाकर करीब एक घंटे तक चुपचाप घूमते रहना, बाद में एक गिलास बर्फ की तरह खूब ठंडा पानी पीना---

गर्मियों में दो गिलास, जाड़ों में एक गिलास। पदम जैसे सेवकों का ध्यान उनकी विशेष रुचि पर सदा रहा। उसे हमेशा याद रहता कि 'बाबू' को नाश्ते में हरिहर का पपीता सबसे पहले चाहिए। उसके बाद मौसमी फल का एक गिलास जूस। अगर इडली, डोसा खाया है तो पूरा गर्म दो कटोरी सांभर बाबू जरूर पिएंगे। नाश्ते के अंत में गर्म कॉफी पिएंगे। सन उन्नीस सौ तिहत्तर के पहले बाबू सुबह नाश्ते पर दो कप कॉफी पीते थे। सन तिहत्तर के बाद सिर्फ एक कप कॉफी लेते और काजू खाना भी छोड़ दिया।

ठीक दस बजे वे बाकायदा सूट पहनकर अपने कार्यालय चले जाते। वहां ढाई घंटे तक जमकर काम करते। कार्यालय चाहे 'बिड़ला बिल्डिंग' कलकत्ता का हो, चाहे 'इंडस्ट्री हाउस' बंबई का, वहां उनके पहुंचते ही जैसे सब-कुछ पूरा तत्पर और सतर्क हो जाता। सारे अधिकारी, सहायक और कार्यकर्ता इतने चैतन्य हो जाते कि उनसे कहीं कोई चूक न हो जाये। वे अपने कार्यालय में कभी-कभी एकाएक भी आ जाते थे। इसलिए कार्यालय में नीचे से ऊपर तक लोगों की नसें जैसे तनी रहती थीं। कोई भी सूचना, तथ्य, फाइल उन्हें चाहिए तो वह तत्काल उन्हें प्राप्त होनी चाहिए। किसी प्रकार का विलंब, बहाना उनके लिए असह्य था। दफ्तर में कोई भी हो, ऊंचे स्वर में टेलीफोन पर बात नहीं कर सकता था। बिड़ला कार्यालय में 'बात' नहीं, सिर्फ काम से काम, यह अलिखित नियम जैसे सर्वत्र कार्यरत है, ऐसा अनुभव होता था।

कार्यालय में अपने कमरे में प्रवेश करते ही 'स्वागतकर्ता' का पहला दायित्व यह देख लेना होता कि सारी घड़ियां एक समय दे रही हैं या नहीं। उनके कमरे का तापमान कम-से-कम छहत्तर और अधिक-से-अधिक अठत्तर फारनहाइट होना चाहिए। 'बंबई इंडस्ट्री हाउस' के स्वागताधिकारी रवि मेहता के अनुसार यदि समय और तापमान में कहीं जरा भी त्रुटि है, तो यह अक्षम्य है।

जो भी काम है, यदि वह निश्चित समय से पहले ही पूरा हो गया है तो इसके लिए भी घनश्यामदासजी ने कभी किसी को 'धन्यवाद' नहीं कहा किंतु वे अपने आचरण से काम करने वालों का उत्साह बढ़ा देते थे। लोग समझ जाते थे, बाबू ने उनका काम पसंद किया है। अगर कोई काम संतोषपूर्ण नहीं हुआ तो कठोर शब्द-व्यवहार से उन्हें कोई संकोच नहीं था। किंतु यह केवल दिखाने के लिए था, मन से सबका भला चाहते थे। उनके चारों तरफ लोग सदा चौकस, सावधान और यहां तक कि डरे-डरे से रहते। घनश्यामदासजी के सहयोगी और विश्वासपात्र ताराचंद साबू के अनुसार कार्यालय के वातावरण में जैसे यह बात सदा खिंची रहती—कारण नहीं

सुनना, कार्य होना है। मेरा सौ रुपये का नुकसान हो जाये, पर कंपनी का एक रुपये का भी नुकसान नहीं होना चाहिए।

'लंच' चाहे आफिस में हो या घर में, घनश्यामदासजी स्वयं बहुत हल्का लेते थे। मेहमानों के लिए लंच कम-से-कम चार 'कोर्स' का होता। बाहर के लोग प्राय: लंच पर ही आमंत्रित किये जाते थे। उनका एक नियम यह भी था कि रात के खाने के समय काम-धंधे की कोई बात नहीं होनी चाहिए। उस समय वातावरण पूरी तरह घर-परिवार जैसा रहे।

घनश्यामदासजी स्वयं हल्का-सा लंच करके, मेहमानों से आवश्यक बातें करके, फिर कार्यालय लौट जाते और अपने काम में लग जाते। साढ़े चार बजे तक काम करते। पांच बजे तक कार्यालय से घर पहुंच जाते। साढ़े पांच बजे तैयार होने चले जाते। नहाकर धोती-कुर्ता पहनते। ड्राइंगरूम में आकर बैठते। बरामदे में थोड़ा टहलते। छह चालीस पर डिनर पूछते, क्या तैयार है और अभी क्या बनना शेष है ? सात साढ़े-सात बजे वे खाना खा लेते। रात के खाने में तीन सब्जी, एक दाल, एक या दो फुल्का, एक चमचा चावल। इसके बाद पापड़, पोदीने की चटनी भी साथ में। फिर कोई मिठाई। भोजन के बाद सबके साथ ड्राइंग रूम में बैठना, आध घंटे तक लोगों से सौहार्द्रपूर्ण बातें करना और फिर एक गिलास बर्फ-जैसा ठंडा पानी पीना। रात के खाने पर, घर के सदस्यों के अलावा जब कोई बाहर का व्यक्ति नहीं होता था, तब वे सबके साथ भोजन करना पसंद करते थे। उस भोजन में होता था—कांजी-बड़ा, नमकीन, देशी मिठाई, मिर्च का अचार, दाल, तीन-चार तरह की सब्जी, फुल्का, हरा नींबू, पापड़। रात के ऐसे भोजन के बाद वे सफेद धोती-कुर्ता पहने जमीन पर बिछे गद्दे पर मसनद के सहारे मजे से बैठकर सवा आठ बजे तक सबसे बातें करते। इस बातचीत में उनकी व्यंग्य-विनोद की फुलझड़ियां भी बीच-बीच में फूटती रहती थीं। घनश्याम-दासजी यहीं से पारिवारिक एकता के प्रतीक दिखायी देते हैं। रात्रि का भोजन बच्चों को पौने सात बजे और बड़ों को साढ़े सात बजे करना होता। रविवार को परिवार के सभी सदस्य बारह बजे दिन को मिलते थे। गोष्ठी होती थी। उसमें चाचाजी, बड़े भाई-जी आदि सभी शामिल होते थे। शिवनारायणजी तंबाकू चिलम में पीते थे। बलदेव-दासजी भी चिलम पीते थे। एक दिन घनश्यामदासजी ने अपने पिताजी से कहा 'चिलम पीना बुरी चीज है, छोड़ दीजिए।' बलदेवदासजी भी दृढ़ प्रकृति के पुरुष थे। उन्होंने तुरंत चिलम पीना छोड़ दिया। एक विशेष बात और है, जब तक भारत आजाद नहीं हुआ, घर में कोई चाय नहीं पीता था। घनश्यामदासजी तब तक केवल

खादी के कपड़े पहनते थे। उन्होंने परिवारवालों से स्वयं कुछ नहीं कहा, लेकिन उनकी देखा-देखी वे भी खादी पहनने लगे। घनश्यामदासजी ने तय कर लिया था कि 'होटल' का व्यवसाय वे कभी नहीं करेंगे, क्योंकि वहां शराब और मांस जरूर रखना होगा।

घनश्यामदासजी पहले नौ बजे सोने को जाते थे, परंतु अंतिम चार-पांच वर्षों में वे साढ़े-आठ बजे अपने शयन-कक्ष में चले जाते थे।' 'रात को सोते वक्त दरवाजा स्वयं अंदर से बंद करते थे। किताब पढ़ते-पढ़ते सो जाते। सुबह आंख खुलते ही 'हे राम, हरे राम' सदा कहते थे। उठते ही पुकारते थे 'पदम'। पदम कहता, 'आया जी बाबू,' अगर जरा-सी देर हो जाती तो कहते, 'कहां चला गया था, किधर भाग जाता है'।"२२२

घर में जब अकेले बैठे होते, रामायण उठा लेते, कभी वाल्मीकि की, कभी तुलसी का रामचरितमानस। गीता के तो परम भक्त थे ही। दिन में कभी अगर झपकी आ जाती, तो वहीं कुर्सी पर ही आंख मूंदकर पड़ जाते। पलंग पर नहीं जाते थे, क्योंकि असमय वे सोना नहीं चाहते थे। उनके मुख से कभी कोई अपशब्द नहीं निकला। उनकी जिंदगी में कहीं कोई परदा नहीं था, कोई रहस्य नहीं था। वे जो थे, सबके सामने थे। बिलकुल स्पष्ट, साफ बोलते थे, चाहे किसी को अच्छा लगे या बुरा। बड़ी-से-बड़ी बात को सबके सामने सहज ही कह देते थे। अगर किसी को उनकी बात से दुख लगता तो वे उसे भरसक समझाने का प्रयत्न करते।

उनका अपना निजी विमान था। उसमें यात्रा करने से पहले कैप्टन गिल से पूछते, "कितनी देर में पहुंचाओगे ?" घड़ी देखते हुए पूछते, "वहां पहुंचने में कितनी देर लगेगी ?" हवाई जहाज में अपने साथ कॉफी ले जाते थे। हवाई जहाज जैसे ही उड़ान भरता, वे हवा का रुख, दबाव, मौसम, जहाज की गति इन सबसे स्वयं हिसाब लगा लेते कि इतनी देर में वहां पहुंच जाना है। जहाज में सफर करते हुए वे चुपचाप अपनी फाइलें देखते, किताब पढ़ते, आवश्यक हुआ तो किसी को अपने हाथ से पत्र लिखते या अपने सहायक से पत्र लिखवाते। इससे छुट्टी मिली तो वे नीचे जमीन देखते—शहरों को, गांवों को, खेतों को, लोगों को, परिचित-अपरिचित राहों को। उन्हें हर चीज में दिलचस्पी थी। उन्हें हर चीज के प्रति जिज्ञासा होती कि यह क्या है, कैसे है, क्यों है ?

इससे भी जब जी भर जाता, वे कैप्टन गिल से फिर पूछते, "अरे भाई, सुनो, कब पहुंचेंगे, इस समय क्या 'स्पीड' है ? 'हेडविंड' है या 'टेलविंड' ?"

---

२२२. पदम, घनश्यामदासजी का निजी सेवक, सन् १९४५ से अंत तक सेवा में

कैप्टन गिल के शब्दों में, "घनश्यामदासजी भीतर से बहुत शर्मीले व्यक्ति थे, बाहर से बहुत दृढ़ आदमी थे। वे दुनिया के सभी विषयों की किताबें पढ़ते थे, उनसे कोई भी मिल सकता था, पर बहुत ही कम लोग उनके करीब आ सकते थे।"

वे स्वयं सहज पुरुष थे, इसलिए सार्वजनिक जीवन में इतनी व्यस्तता के बावजूद वे कभी भी मनुष्य के धरातल से कहीं जरा भी विचलित नहीं हुए थे। जितनी अधिक रुचि उन्हें अपने आपमें थी, उससे कहीं ज्यादा रुचि अपने घर-परिवार, समाज और देश की खुशहाली के प्रति थी। उन्होंने सदैव अपने जीवन के पारिवारिक पक्ष को महत्त्व-पूर्ण माना। विशेषकर बच्चों के विषय में घनश्यामदासजी को कितनी गहरी दिलचस्पी थी, इसका एक बड़ा उदाहरण पुत्र लक्ष्मीनिवासजी, कृष्णकुमारजी, बसंतकुमारजी, तीनों पुत्रियों, भाइयों के बच्चों, आदित्य विक्रम, जयश्री, मंजुश्री, कुमारमंगलम आदि को लिखे उनके पत्रों से मिलता है। बच्चों को लिखे इन पत्रों में घनश्यामदासजी के दादोजी, काकोजी, नानोजी, मामोजी आदि अनेक रूप प्रकाशित हैं। इनमें एक ओर पिता-जैसा अनुशासन भाव है, अध्यापक-जैसी भूमिका है, दूसरी ओर एक सच्चे मित्र, साथी-जैसा प्रेम-भाव है। सिर चढ़ाने वाले, बहुत अधिक लाड़ लड़ानेवाले, बेमतलब प्यार दिखानेवाले की छवि कहीं देखने को नहीं मिलती। घनश्यामदासजी द्वारा बच्चों को दिये गये यही वे नैतिक संस्कार हैं, जिनसे उनको दृढ़ चरित्र मिले हैं, जिनकी झांकी हम कभी भी बिड़ला-परिवार के सदस्यों के आचरणों में सहज ही देख सकते हैं।

घनश्यामदासजी का विश्वास था कि सिर्फ स्कूली शिक्षा प्राप्त कर लेना कोई विशेष बात नहीं है। बच्चों को हर क्षेत्र में सफल होना है, इस बात पर उनका ध्यान रहता था। वे बच्चों के लेकर भविष्य में देखते थे, तदनुसार बहुत पहले ही से निर्णय ले लेते थे। इसके उदाहरण हैं उनके पौत्र आदित्य विक्रम—"जब मैं पांचवीं क्लास से छठी क्लास में आया तभी उन्होंने मुझसे कह दिया था कि तुम्हें अमेरिका भेजेंगे और इंजीनियरिंग पढ़ाएंगे। एम० आई० टी० भेजेंगे। उनकी इतनी अग्रगामी दृष्टि थी कि जब मैं पांचवीं-छठी कक्षा में था, तभी उन्होंने ये सारे निश्चय कर लिये थे मेरे लिए। और फिर वैसा ही किया गया।"२२३

घनश्यामदासजी समय का सदुपयोग करते थे। जब कभी अकेले हुए तो कभी पेंटिंग कर ली, कभी गाना गा लिया, चौके में जाकर कुछ बनाने लगे। कोई किताब उठाकर पढ़ने लगे। सब तरह के अंग्रेजी भाषा में छपे हुए उपन्यास, इतिहास की

२२३. आदित्य विक्रम से साक्षात्कार

पुस्तकें, महापुरुषों की जीवनियां और सबसे अधिक बिकने वाली सार्थक पुस्तकें पढ़ते थे। दवाई और डाक्टरी की किताबें भी पढ़ते थे। आदित्य विक्रम का कहना है, "कभी मेरी मां बीमार होतीं, पिताजी को कोई बीमारी हो जाती, बीमारी का डाक्टर बाद में आता था, दादोजी पहले किताबें मंगवाकर अध्ययन कर यह पता लगा लेते कि बीमारी क्या है, उसकी पहचान और लक्षण क्या हैं और उसकी दवा क्या है ? जितना डाक्टर नहीं पढ़ता था, उतना दादोजी पढ़ते थे। उनको गहराई में जाकर काम करना बहुत अच्छा लगता था।"२२४

यह सब वे अपनी सबल बुद्धि तथा सरल सहृदयता से प्रेरित होकर करते थे। उनकी इसी चारित्रिक विशेषता का यह फल था कि वे पूरे देश और समाज की यथार्थ वेदना और दुख से भी जुड़े रहते थे। दुख और अभाव से मुक्त करने के लिए जैसे हर क्षण वे प्रस्तुत और तत्पर रहते थे। उनके पूरे जीवन-चरित् को देखकर लगता है कि उनकी दया स्वयं उनके दुख की ओर आकृष्ट होती है। दुख और कल्याण के निवारण के लिए भारत को हर तरह से समृद्ध और गौरवशाली बनाने के लिए घनश्यामदासजी ने जितने उपयुक्त उपाय ढूंढ़े और उन क्षेत्रों में जितना कर्म किया, इस दृष्टि से वे अनन्य थे।

घनश्यामदासजी अब जीवित नहीं हैं, लेकिन उनका समग्र जीवन न जाने कितनी पीढ़ियों और पाठकों को प्रेरणा देता रहेगा। वे मात्र उद्योगपति नहीं थे, वे सही अर्थों में कर्मशील, ज्ञानी, और सुसंस्कृत महामानव थे। उन्होंने हर काम में सफलता पायी, इसलिए कहा जा सकता है कि सफलता पाने के लिए उनका जीवन दूसरे लोगों के लिए 'सफलता की कुंजी' है।

---

२२४. आदित्य विक्रम से साक्षात्कार

परिशिष्ट

विशिष्ट व्यक्तियों के पत्र

चित्रमय जीवन-झांकी

संदर्भ (Index)

विशिष्ट व्यक्तियों के पत्र

राष्ट्रपति
भारत गणतंत्र
PRESIDENT
REPUBLIC OF INDIA

11th June, 1983.

Dear Shri Birla,

I am deeply grieved to learn about the passing away of the doyen of industry and the grand old man of India, Shri Ghanshyam Das Birla.

Shri G.D. Birla was a great patriot and a devout nationalist who contributed immensely during the freedom struggle under Mahatma Gandhi. He was one of the foremost and pioneering industrialists of India and a great champion of its cultural heritage. He was an eminent educationist and devoted himself with religious dedication for the rapid expansion and development of scientific and technical education. He was a great philanthropist and initiated several measures and established various institutions for the economic and social upliftment of the country.

His death is a grave loss to the country and removes from the national scene one of the most illustrious and dynamic son of India who may well be called a true 'karmayogi'.

In this hour of sorrow I offer you and the entire Birla family my heartfelt condolences and pray to God to grant peace to this great soul.

Yours sincerely,

Zail Singh

(ZAIL SINGH)

Shri K.K. Birla,
Birla House,
New Delhi.

RAJIV GANDHI
MEMBER OF PARLIAMENT
(LOK SABHA)

2 A MOTILAL NEHRU MARG
NEW DELHI - 110011

June 12, 1983

Dear Shri Birla,

I am deeply grieved to hear of the death of your father, Shri G.D. Birla, the doyen of Indian industry.

His was a great and pioneering life, lived to the full. The contribution he made in helping to build India's industrial base will be his lasting memorial. His passing away is a loss to Indian industry and to India.

Please accept my heartfelt sympathy and condolences.

Yours sincerely.

Shri K.K. Birla
7 Tees January Marg
New Delhi.

N. T. RAMA RAO
Chief Minister

HYDERABAD
Dated:13.6.1983

Dear Sri Birla,

I am deeply grieved to learn the sad news of the sudden demise of your father Sri G.D.Birla in London.

He was the grand old man of Indian industry and business, who laid solid foundation for the establishment of several industries in the country. He was a great patriot of high order, known for his spirit of philonthropy and yeomen service to the cause of freedom struggle.

I convey my deep sympathy to you and other members of your family.

May his soul rest in peace.

With regards,

Yours sincerely,

(N.T.RAMA RAO)

Sri K.K.Birla,
Birla Brothers,
9/1, R.N.Mukherji Road,
Calcutta.

प्रयाग महिला विद्यापीठ

(महिला विश्वविद्यालय)

डा० महादेवी वर्मा
एम० ए०, साहित्य वाचस्पति
उप-कुलपति

२५ सी अशोक नगर
~~[illegible], हीवेट रोड,~~
इलाहाबाद
तिथि [illegible]

आयुष्मान [illegible]
[illegible]
शुभाशीर्वाद।

भाई [illegible] जी के विदेश में निधन होने के समाचार से बहुत दुःख हुआ। [illegible] – पर [illegible] नहीं [illegible] नहीं। जब माता-पिता नहीं रहते हैं तब हम बड़े होने पर भी अनाथ जैसा अनुभव करते हैं। फिर तुम्हारे लिए तो ये माता-पिता दोनों का स्थान थे।

तुम्हारी चिन्ता और व्यथा को मैं समझ सकती हूँ, क्योंकि मेरे पास भी ये दोनों नहीं हैं।

तुम सब उनके पदचिह्नों पर चलकर उनका नाम [illegible] कर सको, यही कामना है।

शुभेच्छुका
महादेवी

THE PRI[illegible]

[illegible]

I
your f
distin
passin
sincer
members

Mr. B.

10 DOWNING STREET

THE PRIME MINISTER

14 June, 1983

Dear Mr. Birla,

I was deeply distressed to hear that your father died on 11 June. He was a most distinguished citizen of India and his passing will be widely mourned. I send my sincere condolences to you and to all members of your late father's family.

Yours sincerely

Margaret Thatcher

Mr. B. K. Birla.

EMBAJADA DE CUBA

"Unofficial Translation"

Havana, June 12th, 1983.

Mr. K.K. Birla

Dear Sir,

The news of the unexpected passing away of Mr. G.D. Birla has shaken us. We were expecting his visit which had already been coordinated between us to continue personally the important exchanges so promissorily initiated.

Please convey to the rest of Mr. Birla's relatives and members of the economic group he led the testimony of my personal condolence and the expression of solidarity of the Government and people of Cuba in this moment of grief and sorrow.

Yours sincerely,

Fidel Castro Ruz
President of the Council of State
and Government of the
Republic of Cuba.

ial Translation"

G.D. Birla has
had already been
the important

ives and members
my personal con-
he Government and
row.

: ४ मार्च
द विश्व-
१९५० से
दी नाटक-
रंगमंचीय
चार ग्रंथ
न के लिए
पुरस्कृत।
भाषाओं
ट्रीय परि-
लोकनायक
ाकार।
कर्मयोगी
जीवनी-
या है।

चित्रमय
जीवन - झांकी

घनश्यामदासजी के पिता राजा बलदेवदासजी और मां रानी योगेश्वरी देवी

घनश्यामदासजी का सन् १९०५ में लिया गया सबसे पहला चित्र

४ मार्च
द विश्व-
९५० से
ी नाटक-
रंगमंचीय
ार ग्रंथ
के लिए
पुरस्कृत।
भाषाओं
ीय परि-
ोकनायक
ाकार।
कर्मयोगी
जीवनी-
या है।

छात्रावास :
आयु बारह वर्ष

परंपरागत
मारवाड़ी वेशभूषा में :
आयु १५ वर्ष

: ४ मार्च
ाद विश्व-
१९५० से
ूदी नाटक-
क रंगमंचीय
चार ग्रंथ
न के लिए
पुरस्कृत।
य भाषाओं
ष्ट्रीय परि-
लोकनायक
ाकार।
कर्मयोगी
र जीवनी-
दया है।

आयु मात्र बीस वर्ष :
भविष्य की अग्रगामी दृष्टि

राजस्थान की राजशाही वेशभूषा में :
आयु तीस वर्ष

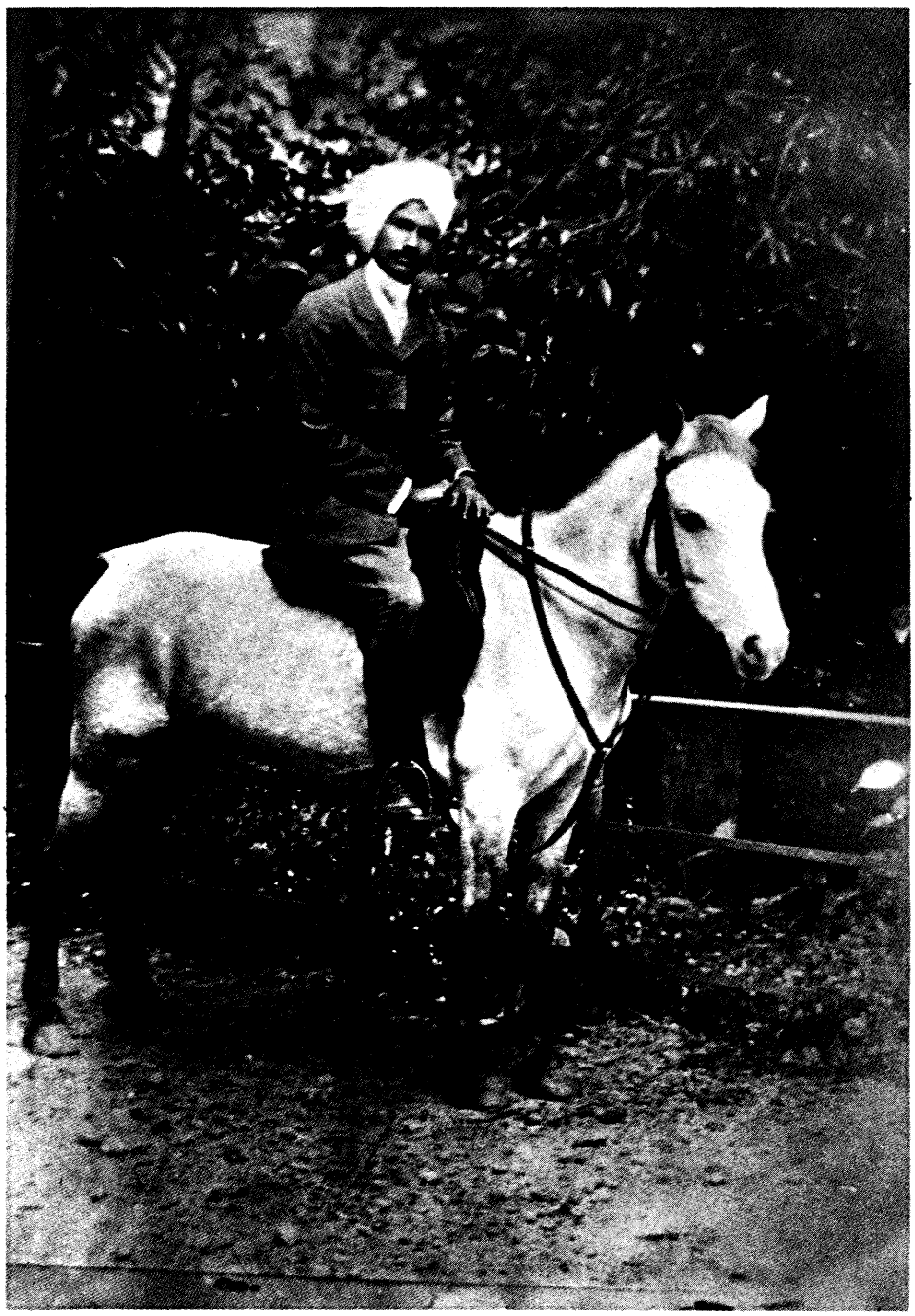

दार्जिलिंग में : उन्हें घुड़सवारी का शौक था

प्रथम पत्नी दुर्गादेवीजी

४ मार्च
द विश्व-
१९५० से
ी नाटक-
रंगमंचीय
ार ग्रंथ
के लिए
पुरस्कृत।
भाषाओं
ट्रीय परि-
लोकनायक
ाकार।
कर्मयोगी
जीवनी-
या है।

आस्थावान भविष्यद्रष्टा

: ४ मार्च
द विश्व-
१९५० से
दी नाटक-
रंगमंचीय
चार ग्रंथ
ा के लिए
पुरस्कृत।
भाषाओं
ट्रीय परि-
ोकनायक
कार।
कर्मयोगी
जीवनी-
या है।

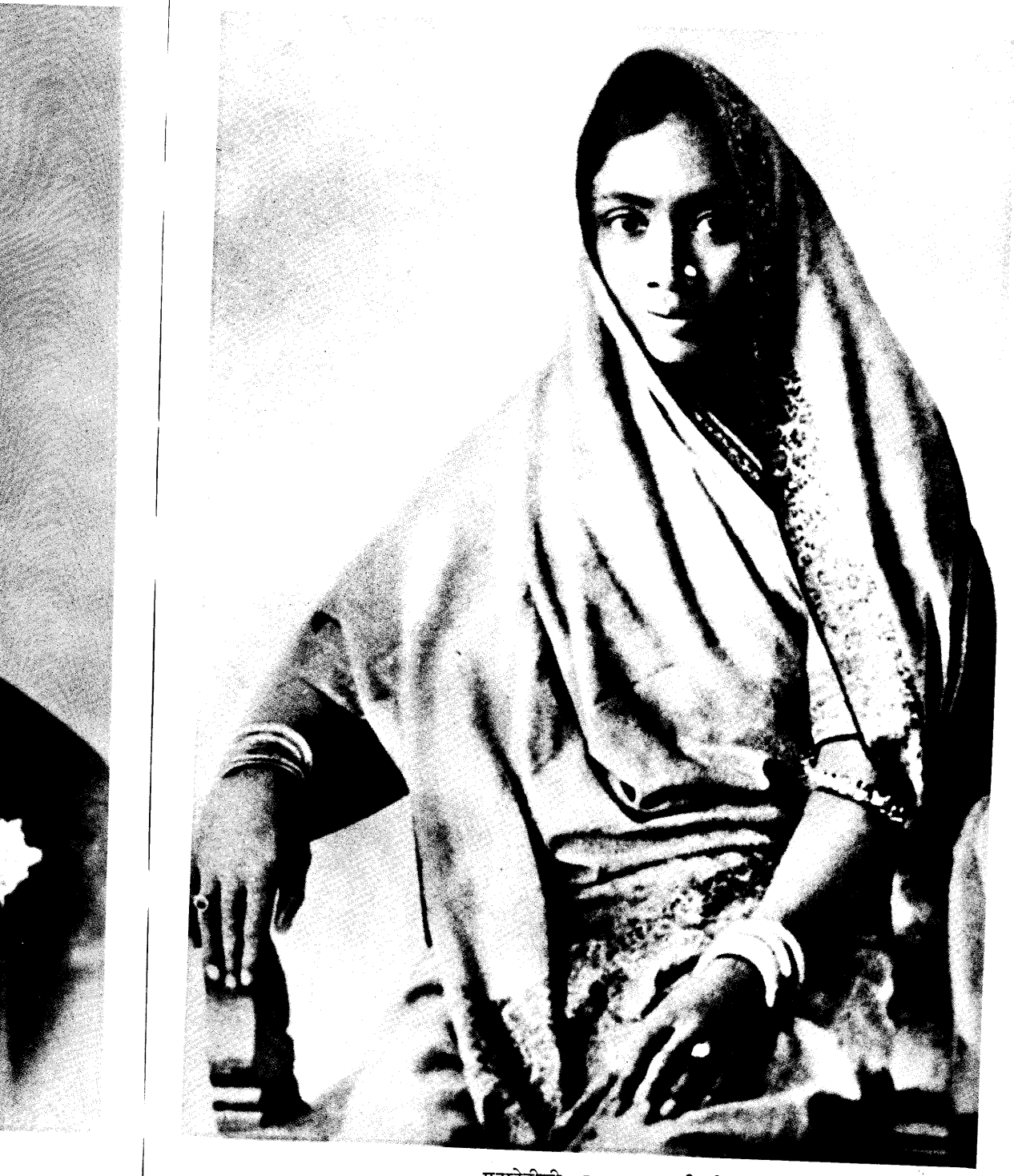

महादेवीजी : घनश्यामदासजी की दूसरी पत्नी जो मृत्यु के बाद भी
निरंतर जीवन भर प्रेरणा-स्रोत बनी रहीं

चारों भाई, एक सुखी परिवार;
बाएं से क्रमशः सर्वश्री जुगलकिशोरजी,
रामेश्वरदासजी, घनश्यामदासजी एवं
ब्रजमोहनजी बिड़ला

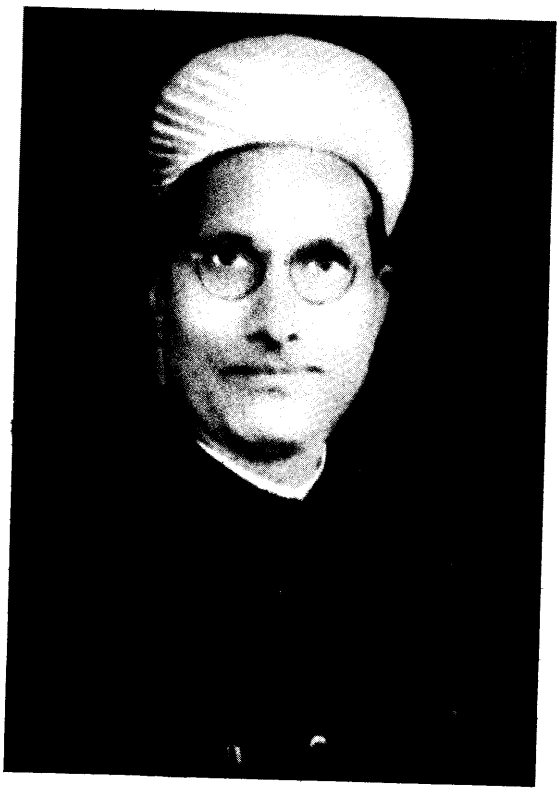

एक सफल उद्योगी की
प्रशांत मुद्रा

र;
किशोरजी,
जी एवं

द्वितीय पत्नी महादेवीजी की मृत्यु के बाद
युवा घनश्यामदासजी को दो पुत्र
और तीन पुत्रियों का भार सम्हालना पड़ा
उनकें एक पुत्र पहली पत्नी से थे

४ मार्च
द विश्व-
१९५० से
ी नाटक-
रंगमंचीय
ार ग्रंथ
के लिए
ुरस्कृत।
भाषाओं
ीय परि-
ोकनायक
कार।
कर्मयोगी
जीवनी-
ा है।

एक उद्योगपति का सौम्य व्यक्तित्व

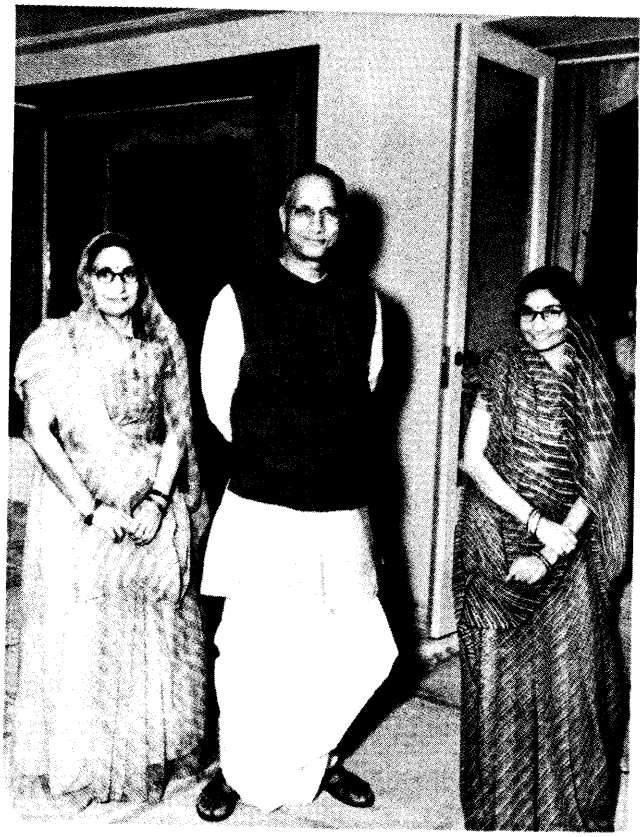

घनश्यामदासजी अपनी बहनों के साथ। दायीं ओर श्रीमती जयदेवी कोठारी, बायीं ओर श्रीमती कमलादेवी मंत्री

यक्तित्व

परिवार के बीच घनश्यामदासजी : बात करते हुए शोभनाजी से ।
पीछे हैं, श्री माधवप्रसाद बिड़ला की पत्नी श्रीमती प्रियंवदादेवीजी
और श्री कृष्णकुमार बिड़ला की पत्नी श्रीमती मनोरमादेवीजी

एक महान उद्योगपति :
कोई आकांक्षा शेष नहीं

४ मार्च
द विश्व-
१९५० से
ी नाटक-
रंगमंचीय
ार ग्रंथ
के लिए
ुरस्कृत ।
भाषाओं
ोय परि-
ोकनायक
ार ।
र्मयोगी
जीवनी-
ा है ।

रेगिस्तानी जहाज ऊंट की सवारी का अपना मजा है

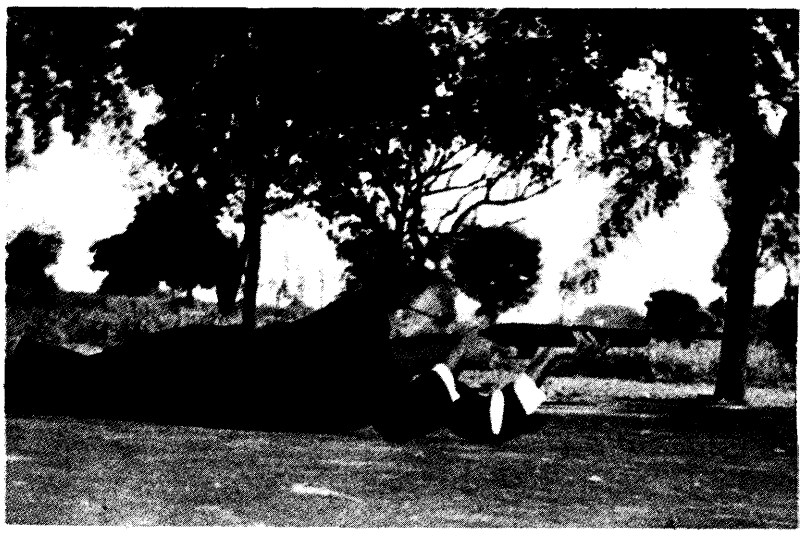

कुशल निशानेबाज : घनश्यामदासजी

कुशल निशानेबाज : घनश्यामदासजी

घनश्यामदासजी वायलिन बजाते हुए तल्लीन हो जाते थे

चित्रकला उनका शौक था

४ मार्च
: विश्व-
९५० से
ो नाटक-
रंगमंचीय
ार ग्रंथ
के लिए
रस्कृत।
भाषाओं
य परि-
कनायक
ार।
र्मयोगी
जीवनी-
है।

महात्मा गांधी की
छाया में :
साथ घूमना, सुनना
और सीखना

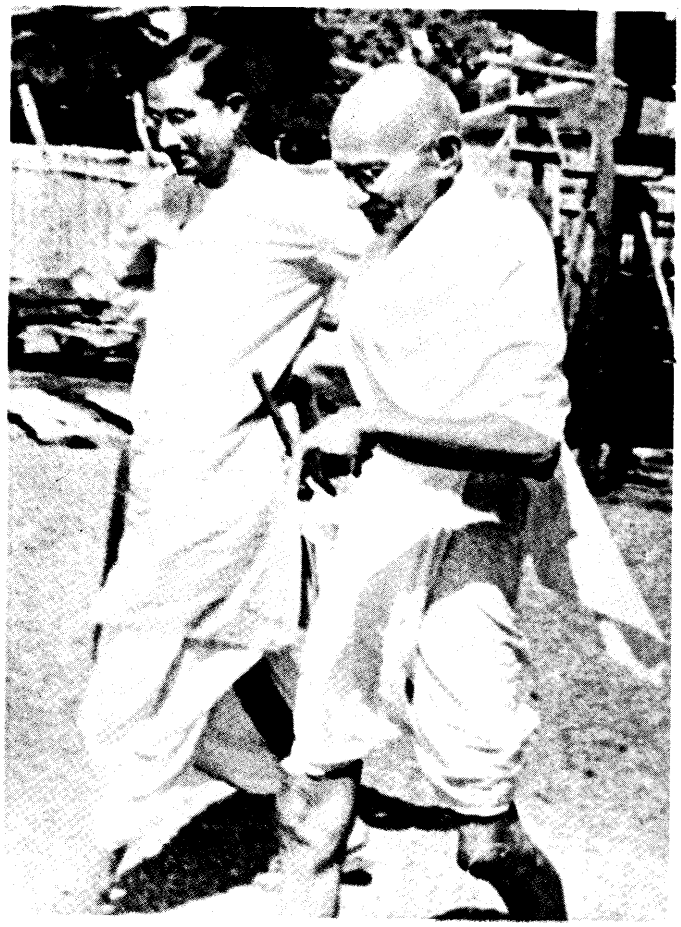

घनश्यामदासजी—गांधीजी
महामना मदनमोहन मालवीय
और अन्य नेताओं के साथ

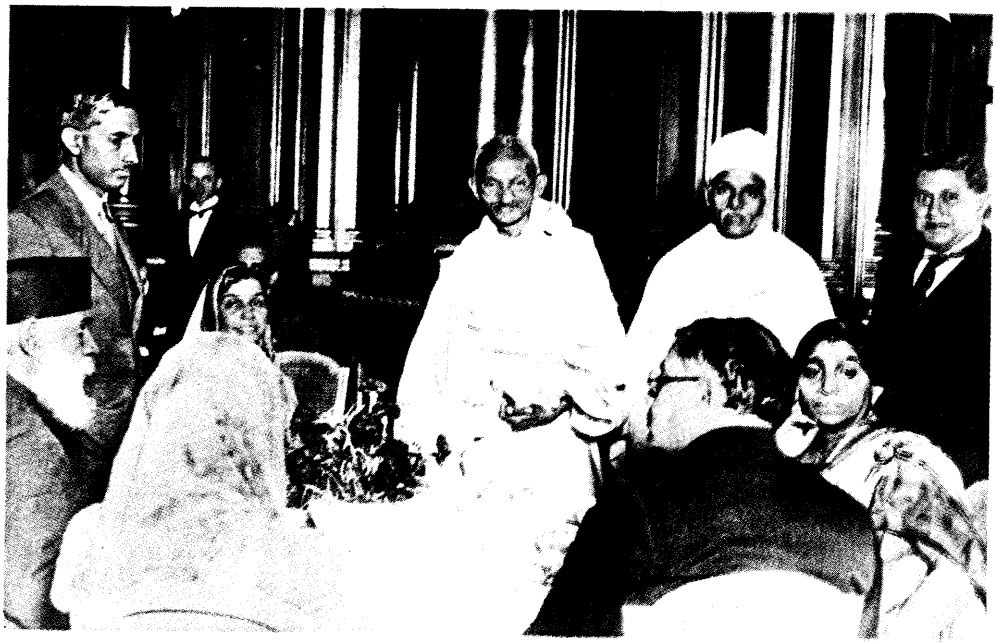

लौह-पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल :
पराक्रमी उद्योगपति घनश्यामदासजी

आचार्य विनोबा भावे के सहयात्री

: ४ मार्च
द विश्व-
१९५० से
दी नाटक-
रंगमंचीय
चार ग्रंथ
र के लिए
पुरस्कृत।
भाषाओं
ट्रीय परि-
ोकनायक
कार।
कर्मयोगी
जीवनी-
या है।

मौलाना अबुल कलाम आजाद
के साथ : दोस्ती का हाथ

गोविंदवल्लभ पंत और
जवाहरलाल नेहरू : बीच में हैं
घनश्यामदासजी

कलाम आजाद
ी का हाथ

घनश्यामदासजी
इंदिराजी के साथ

४ मार्च
द विश्व-
१९५० से
ी नाटक-
रंगमंचीय
वार ग्रंथ
के लिए
पुरस्कृत।
भाषाओं
ीय परि-
ोकनायक
कार।
कर्मयोगी
जीवनी-
ग है।

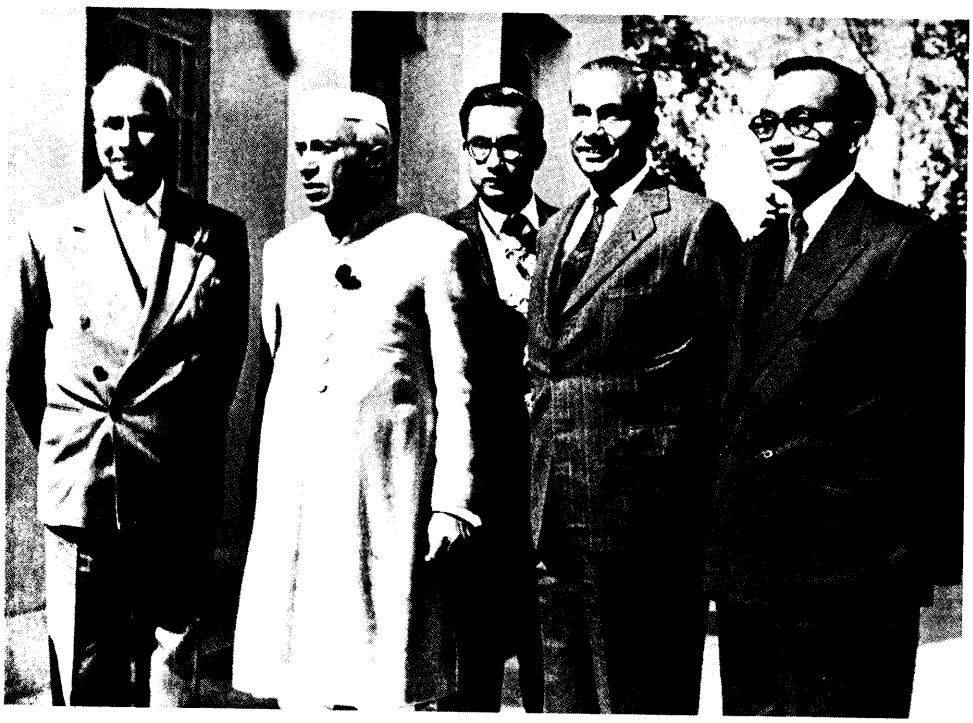

पंडित नेहरू के साथ घनश्यामदासजी, पीछे हैं तीनों पुत्र :
बसंतकुमारजी, लक्ष्मीनिवासजी एवं कृष्णकुमारजी

राष्ट्रपति डा० राजेंद्रप्रसाद : गंभीर मंत्रणा में व्यस्त घनश्यामदासजी

दुर्लभ मुसकान : घनश्यामदासजी और राजगोपालाचारी

२९ अक्तूबर १९५७ को पद्मविभूषण से सम्मानित करते हुए भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा. राजेंद्रप्रसाद

प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के साथ : विनोद के कुछ क्षण

अमेरिका के राष्ट्रपति आइजन हावर से मैत्रीसूत्र जोड़ते हुए घनश्यामदासजी

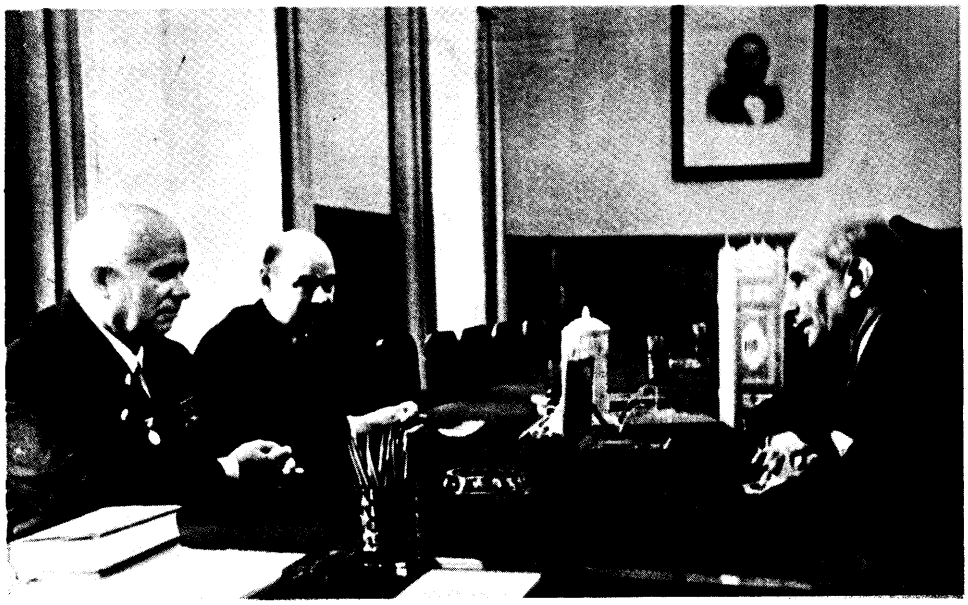

सोवियत संघ के प्रधानमंत्री ख्रुश्चेव :
घनश्यामदासजी से परामर्श

सन् १९७६, यूगोस्लाविया में
मार्शल टीटो के मेहमान के
रूप में घनश्यामदासजी

भारतीय पद्धति से मेहमानों को 'बिड़ला हाउस' में भोजन : चित्र में क्रमश: चीन के राष्ट्रपति च्यागकाई शेक, उनकी पत्नी और घनश्यामदासजी

प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री से मंत्रणा

एथोपिया के सम्राट हेल सिलासी : एक आत्मीय क्षण

फिलिपींस में घनश्यामदासजी का स्वागत :
राष्ट्रपति मारकोस द्वारा

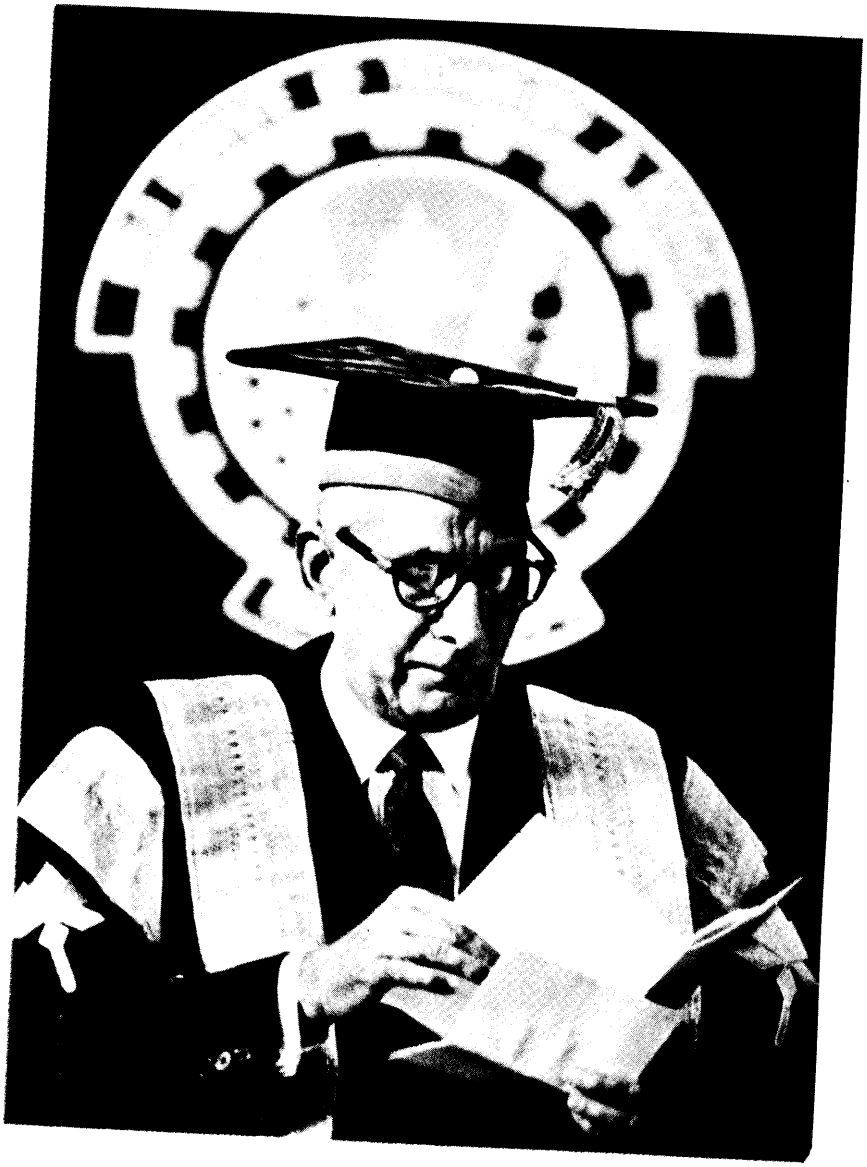

बी० आई० टी० एस० के दीक्षांत समारोह में

जमुनोत्र
४२ किलोमीट

ब्रिटेन की प्रधानमंत्री मारग्रेट थैचर से हाथ मिलाते हुए

जमुनोत्री के दुर्गम पथ पर,
४२ किलोमीटर की पैदल यात्रा

: ४ मार्च
ाद विश्व-
१९५० से
्दी नाटक-
ं रंगमंचीय
ाचार ग्रंथ
न के लिए
पुरस्कृत।
ा भाषाओं
्ट्रीय परि-
लोकनायक
ाकार।
कर्मयोगी
र जीवनी-
ाया है।

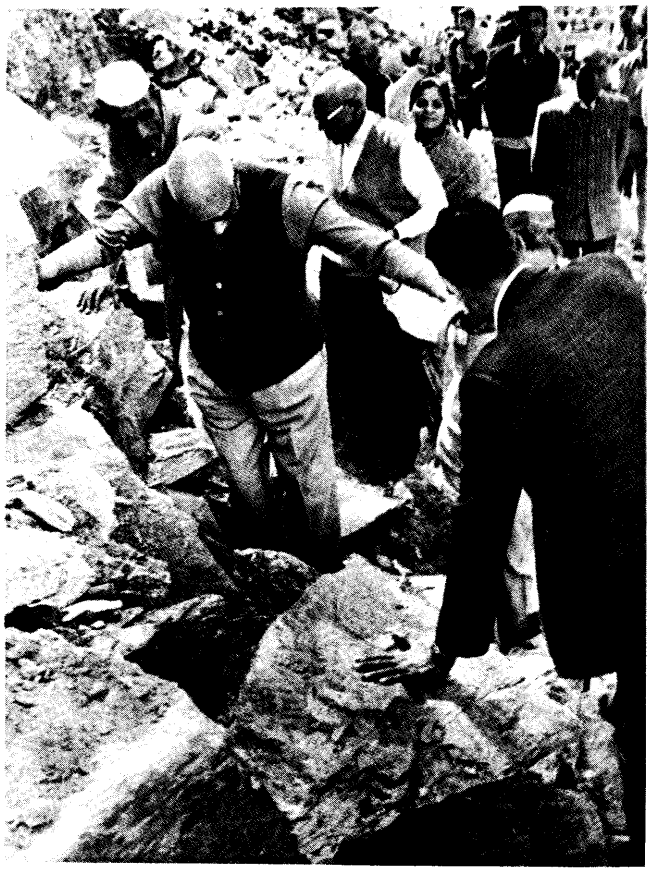

बम्बई में :
शौक फोटोग्राफी का

घनश्यामदासजी अपने भतीजे श्री गंगाप्रसाद बिड़ला और उनकी पत्नी के साथ

लंदन में महान आत्मा के अंतिम दर्शन

शोकाकुल बिड़ला-परिवार ने आभार माना :
श्री अटल बिहारी वाजपेयी

मात्र स्मृति शेष है : राष्ट्रपति जैलसिंह, पास खड़े हैं दोनों भाई—कृष्णकुमारजी और बसंतकुमारजी

श्री राजीव गांधी : पारिवारिक सांत्वना के क्षण

नयी दिल्ली के बिड़ला मंदिर से अस्थिकलश
लेकर निकलते हुए कृष्णकुमारजी

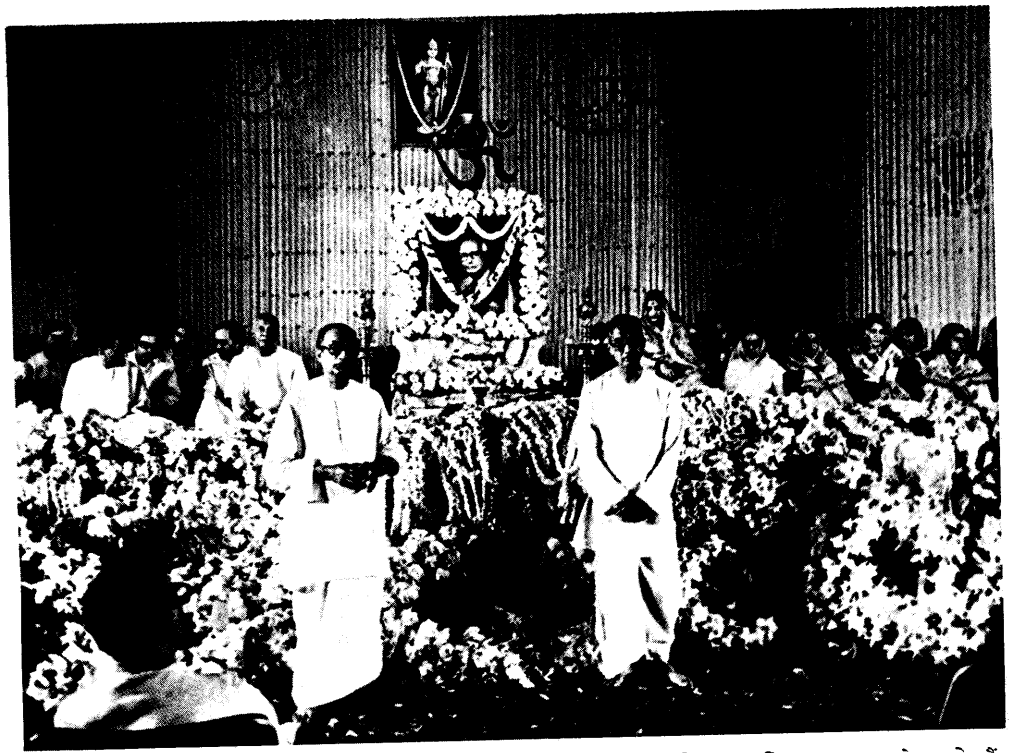

कलकत्ता में शोकाकुल बिड़ला-परिवार : सामने खड़े हैं
कृष्णकुमारजी और बसंतकुमारजी

मार्च
विश्व-
५० से
नाटक-
मंचीय
र ग्रंथ
के लिए
स्कृत।
ाषाओं
परि-
नायक
र।
र्मयोगी
जीवनी-
है।

लंदन में कास्केट में
घनश्यामद
पार्थि
शोकातु
कृष्णकुमा
और उन
श्रीमती मनोरम

मृतात्मा की शांति के लिए हवन : हाथ जोड़े बैठे हैं कृष्णकुमारजी

पार्थि
एक कर्मयोगी का

अमरता की ओर :
पुत्र कृष्णकुमारजी और
बसंतकुमारजी द्वारा अर्घ्यदान

के लिए हवन : हाथ
कुमारजी

और
अर्घ्यदान

लंदन में कास्केट में रखा हुआ
घनश्यामदासजी का
पार्थिव शरीर :
शोकातुर खड़े हैं
कृष्णकुमार बिड़ला
और उनकी पत्नी
श्रीमती मनोरमा देवीजी

पार्थिव शरीर :
एक कर्मयोगी का महाप्रयाण

: ४ मार्च
ाद विश्व-
१९५० से
दी नाटक-
रंगमंचीय
चार ग्रंथ
ा के लिए
पुरस्कृत।
भाषाओं
ट्रीय परि-
लोकनायक
ाकार।
कर्मयोगी
: जीवनी-
या है।

संदर्भ

(Index)

अकबर—२१
अखंडानंदजी—१८, २९१, २९६, ३१५
अजमल खां—१३३
अतुलनाथ—७८
अनुसूया—१०४, ११४, २०९
अंबेडकर—१६६, ३३५, ३३६
अमरनाथ झा—२२१
अली इमाम—१५०
अशोक वर्धन—२६५
आइन्स्टाइन—२२६
आदित्य विक्रम—२१०, २१४, २३९, २५६-२५७, ३११, ३१३, ३१८, ३६२, ३६३
आर्थर मैक्वाटर—१९७
आर्कमिडीज—२२६
अब्राहम लिंकन—२२६
आयंगर—१२९
आस्टिन चेंबरलेन—२०१
आसफअली—१८९
इंदिरा गांधी—१९२, २३६, २५८, २६०, २६३, २६८
ई० जैनिकन्स—१८५
उदयरामजी—१८-२०
उदित मिश्र—१०७
उमर खैयाम—११३
एटली—१७२
एडम स्मिथ—६६
एडवर्ड बेंथल—१५६-१५७, १५९, १६२
एंथनी इडेन—२३०
ओंकारमलजी सर्राफ—६८-६९, ७९
ओंकारमलजी सोमानी—३२०
कस्तूरमाई लालचंद—९५
काइजर—२४२-२४३
कालीप्रसाद खेतान—८०
कन्हैयालाल चितलांगिया—६९, ७९
कार्लहीथ—१८१
कालिदास—२२६
कस्तूरभाई लालभाई—२३३, २३६
किसले मार्टिन—२०१
कुमार मंगलम—२६१, ३०४, ३०७, ३२०, ३६२
कानसिंह—३४, ३५
केशोरामजी—५५, ९६
कैलाशचंद्र बोस—७९
के० एस० रामानुजम्—११२
के० टी० शाह—१५८
कैंपबेल रोड्स—१६१-१६२
के० एम० मुंशी—१८२, २२१
कस्तूरबा—१८३
कृष्णचंद्र पंत—१९०
कृष्णगोपाल माहेश्वरी—२०९-२१०, ३२०
कैनेडी—२२६
क्रोथर—२३१
कृष्ण मेनन—२३९
कैप्टन गिल—३६१-३६२
कृष्णकुमार बिड़ला—६८, ८१, ९५, १०६-१०७, १११, ११४-११५, १४५, १९०, १९२, २१०-२१३, २२२, २३७, २४४, २६२-२६४, ३१८-३२२, ३३९, ३४१, ३६२

कृष्णमचारी टी० टी०—२५८-२५९
गनेड़ीवाला—२०-२१, २३-२४
गजाननजी—२६५
गालब्रेथ—२४३
गंगाप्रसाद बिड़ला—२६४-२६५, ३१८, ३४१
गंगाप्रसाद भोतिका—६८
गांधीजी—६६, ७६-७७, ७८-८०, ८६, ८९-९०, ९२-९६, ९८, १०३-१०४, १०७-११०, ११२-११५, ११६-१३८, १४१-१५९, १६१-१७८, १८०-१८६, १८८-१९१, १९७, २०१-२०२, २०४, २०६, २११, २१३, २२०-२२१, २२६-२२८, २३०, २३२, २३७, २४५, २४७-२४८, २५०-२५१ २५७, २७७-२७८, २८४, २९०, ३३०, ३३३, ३३५, ३३८, ३५३-३५४
गोविन्दवल्लभ पंत—१९०, २२१, ३३८-३३९, ३४१
गिलबर्ट लाफेट—२०५
गुलामा फरीदी—२२४
गैलेलियो—२२६
गोखले—३५४
गुरु नानक—२२६, ३३६
गोवर्धनप्रसाद पोद्दार—९६
गौरीदत्त मंडेलिया—७८
चंद्रकला—७८, ८०, १०६, १११, ११४, ११६, २३८, ३१६
चर्चिल—१५२, १७२, १७७, २०१, २०३, २०५, २२९-२३१
चंद्रकांत बिड़ला—२६५
चिन्मयानंदजी—२९१, ३३२
चियांग काई शेक—२५७
चू एन लाई—२५७
चुन्नीलाल सरैया—५३
चुन्नीलालजी—१९, ३६
छाजूरामजी—५६, ७९-८०
जगजीवनराम—१८९
जमनालाल बजाज—१७-१८, ९२, १२१, १३२-१३३, २२१, ३५३
जयमलजी—१८
जयदेवीबाई—४८
जयदेवीजी—६४, १०५
जमशेदजी टाटा—७५, १९५, २६४
जगतसेठ—१०६
जयकर—१२९, १५३-१५५, १६६
जवाहरलाल नेहरू—१४२, १६३, १७५, १७७, १८०, १८७-१९१, २०८, २२१, २२३, २२८- २३०, २३२-२३५, २३७, २४०-२४३, २५९-२६०, २७६, ३३८-३३९, ३५३
जमाल मुहम्मद—१४३, १५९
ज्वालाप्रसाद मंडेलिया—१६७
ज्वालाप्रसाद कानोड़िया—६८-६९, ७९
ज्योफरी डासन—२०१
जरथुष्ट्र—२२६
जयश्री—३०४, ३१०, ३१६, ३६२
ज्योति बसु—३२२
जान हालिस्टर—२४०
जार्ज हंफी—२४०

जान सार्जेंट—२२२
जान मथाई—१८६, १८९
जान एंडरसन—१६५, २३१
जार्ज शुस्टर—१६४, १७२, १९७
जार्ज पंचम—१४३, १५८
जे० एन० टाटा—५५
जे० सी० पटेल—३०३
जोसेफ डाज—२४०
जोशी, प्रोफेसर—१५८
जुहारी देवीजी—४६
जुगलकिशोर बिड़ला—१३, २५-२६, ४५-४७, ५४-५६, ६१-६२, ६९, ८०, ८५-८६, ११४, १२२, १३६, १६८-१६९, २२५, २६१
टामस एडीसन—२२६
ठक्कर बापा—१६६-१६८, १७०, २७६, ३५३
डब्ल्यू डब्ल्यू वुड—२२२
डा० अंसारी—१११
डा० अंबाप्रसाद—५१
डा० कैलाश बाबू—१११
डा० विधानचंद्र राय—२११
डुंडीराज—१०७
ताराचंद साबू—३१२, ३५९
तिलक, बालगंगाधर—५२, ६६, ७६, ३२२, ३५४
तुकाराम, संत—२२६
तुलसीदासजी—६१, १०७, २२६
तेजबहादुर सप्रू—१५३-१५५, १६५-१६६, १८२
दयानंद सरस्वती—६६
दलाई लामा—३३८-३३९, ३४१
दलेलसिंहजी—१९
दुर्गादेवी—४६, ५१-५२
दुर्गाप्रसाद मंडेलिया—२२४, २९०, २९५, ३०२, ३१२, ३१९-३२०, ३४४, ३५६-३५७
देवधर शर्मा—३१२, ३१५
देवदास गांधी—१६६
देवीप्रसाद खेतान—८२, २०३
देवीदयाल सर्राफ—७८
देवीदत्त जालान—६८
धन्वंतरि—२२६
नंदलाल—३१७-३१८
नरसी भाटिया—५५
नवलसिंह—१९
न्यूटन—२२६
नाहरसिंह—२८२
नागरमल मोदी—६९
नाथूराम गोडसे—१९०
नरेंद्रसिंह तापड़िया—२०९
निर्मला देवी—३१८, ३४१
नोएल बेकर—२३१
एन० आर० मलकानी—१६७
पटेल—१२७, १२९
प्यारेचरण सरकार—३५
पाणिनी—२२६
पारसनाथजी—१०६, १२५, २६६
प्यारेलाल—१८३, १८८
पिक्सली एबल—५३
पिलाणिया जाट—१९
प्रदीप डागा—३२०
पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास—८६, ९२, ९५, ९८, १४६, १५४, १५६, १५८-१५९, १६३, १९७-१९८, २०४-२०५, २२१

प्रभुदयालजी हिम्मतसिंहका—६८-६९, ७८, २२१, २५०
प्रेमसुखदासजी—६३
फिडेल कास्त्रो—२५०
फिडलेटर स्टुअर्ट—१६५, १७६, २०१
फिरोजशाह सेठना—१५८
फैंक नायस—१९७
फूलचंद चौधरी—६९,७८
बटलर—१७२, २०१
बलदेवदास बिड़ला—१८-२१, २३, २५-२६, ४०, ४५, ४७-४८, ५०, ५६, ६१-६३, ८०-८१, ८३-८४, ९७, १०६, १११, ११५, १६९, २२४-२२५, २३७, ३१०, ३६०,
बसंतकुमार बिड़ला—१०३, १०७, १११, ११४-११५, १४५, १४८, १७१, १७६, २१२-२१४, २२२, २३६-२३७, २९०, २९२, २९५, ३०४, ३१०-३१२, ३१५, ३१९, ३२२, ३६२
बसंतलालजी मुरारका—६८
बसंतदादा पाटिल—३२१
बंकिम बाबू—६७
बाघसिंह—१९, ८३-८४
बंशीधरजी डागा—११६, २११, २३८
बाल्डविन—१३६, १७२, २०१
बाबूलाल बियाणी—३१५
बालचंद हीराचंद—७५, ९२, १९५, १९७
बिपिनचंद्र गांगुली—६८, ७६, ७८, २७८
बी. डी. पांडेय—३२२
बेविन—२३१
बेसिल ब्लैकेट—२०१
बेजवुड बेन—१३४, १३६, १४२, १५० १५६
बेहड़सिंह—१८
बैजनाथ केड़िया—६९
ब्रजमोहनजी—८०, ८५,-८६, ११४, १४६, २१३, २२५, २५५, २६२, ३०२, ३१०
ब्रजलाल बियाणी—२१३
बृहस्पति—२२६
बुद्ध—२२६
भगवती प्रसाद खेतान—२५०
भगवानदासजी—९५
भागीरथ कानोड़िया—२५०
भास्कराचार्य—२२६
भूधरमलजी—१८-१९
मदनसिंह—१९
महादेव सोमानी—४६, ५६
महादेवीजी—६३-६४, ८०-८१, १०३-११३, १२१, १२३, १४६, ३०५,
महावीरप्रसाद पोद्दार—६८
मदनमोहन मालवीय—९३, ९५, १११, १२०, १२२-१२३, १२५, १२७-१२९, १३३, १३५ १४५, १४७, १४९-१५०, १५४-१५५, १६६, १९७, २२१, २६१, २८०, ३५३

महबूब अली—१०६
मधुसूदनदास—१२१
महादेवभाई—१३०, १३३, १३८, १६६-१६७, १७५, १७७-१७८, १८३, २०४, २२१, २७६, ३५३
मनु—२२६
महावीर—२२६
एम० ओ० मथाई—२३३, २३५-२३६, २३९-२४१
एम० सी० कोठारी—२३३
मणि बेन—२७६
मंजुश्री—३०४, ३१५, ३६२
माखनलाल चतुर्वेदी—३५२
मार्क्स—२२३, २२६
मारिस ग्वायर—२२१-२२२
मनोरमा देवी—२१३, ३२०, ३२२, ३३९
मानिक जी—१५८
माणिकरामजी—१९
मानसिंह—२१
मानकरामजी—२१
माधवसिंह—८३-८४
मा० सिंधिया-९७
मिषगाचार्य—१११
मीराबाई—१०७, २२६
मीरा बेन—१४७
मोकाटो—५३
मोंटग्यू—५३
मोतीलाल नेहरू—९५, १२०, १२९, १४३, २२८
माधवप्रसादजी—९५, १४५, २२२, २३७, ३२०
मैक्डोनल्ड—१५०, १५२, १६६, १७२
मोहम्मद अली जिन्ना—१५८
मोरारजी देसाई—२२५
मैडम क्यूरी—२२६
मौलाना आजाद—२३५
मुहम्मद इकबाल—१५०
मुरली मनोहर—६३
यूजीन ब्लैक—२४०
योगेश्वरी देवी—१८, १०६, ३५३
रमाबाबू गोयनका—३२०
रवींद्रनाथ टैगोर—२०४, २२६
रंगास्वामी आयंगर—१५८
राकफेलर—२४०
राजकुमार गुप्त—२३७
राजश्री—२५७, ३०४, ३१३
रामकिंकर उपाध्याय—३०९, ३१३
रामनिवास जाजू—३१२, ३१५
रामकृष्ण बजाज—३१२
रामसुखदासजी—१९
रामधनदासजी—१९
राव शेख—१९
रामेश्वरदास बिड़ला—२६, ३२-३४, ४५-५३, ५५, ७६, ८०, ८३, ११४, ११९, १४६, १६५, १८७, २०८, २२१, २२५, २५५, २६७, ३०२
रामदेवजी—३३
रामविलास—३५
रामप्रसाद सोमानी—४६
रामकुमार भुवालका—६८, २५०

राजाजी—१६६, १८२, १८९
राजर हिक्स—१८१
रामशरणदास—२०३
रामकुमार केजरीवाल—२१३
राधाकृष्णन्—२२१, २२४
रामानुजाचार्य—२२६
रामकृष्ण परमहंस—२६६
राजेंद्र प्रसाद—१६६, १८९, २२१, २३८, २४७
रुस्तमजी सालिसिटर—४५
रूजवेल्ट—२००
रेजिनाल्ड क्लार्क—२०३, २०५
रेमजे मैक्डोनल—१३६
रेजिनाल्ड मेंट—१५८
लक्ष्मणसिंहजी—१९
ल्होड़ती दादी—३६
लक्ष्मीनिवास बिड़ला—५१, ६३, ८०, ८४-८५, १०५-१०६, १०८, ११४-११६, १३२, १४४, १९५, २२२, २२४, २६१, २६५, ३१२, ३२०, ३६२
लच्छीरामजी—१११
लार्ड चेम्सफोर्ड—८१
लार्ड विलिंगडन—१३५, १४४, १६५, २०१
लार्ड इरविन—१३५, १४२, १४४
लार्ड टेम्पिलवुड—१३६
लार्ड लोदियन—१५६, १६१, १६४-१६५, १७२-१७४, १७६, २०१, २०५,
लार्ड हैलीफैक्स—१७२, १७४-१७६, २३१
लार्ड लिनलिथगो—१७२-१७४, १७८-१८२, १८५, ३५४
लार्ड जेटलैंड—१७२, १७४, १७६
लार्ड वैवेल—१८५-१८६, १८९
लार्ड एमेरी—१८५-१८६
लार्ड पेथिक लारेंस—१८७
लार्ड माउंटबेटन—१८९-१९०
लार्ड एलेक्जेंडर—२३१
लालबहादुर शास्त्री—२६०
लाला लाजपतराय—७६, ९५, १२३, १२५, १२७-१२९, १३३, २६१,
लाला श्रीराम—९२, १४३, १९७
लियाकत अली—१८७, २३५
लेनिन—२२६
लेथवेट—१८४-१८५
लुई पास्चर—२२६
लोकनाथ—३०९
वाल्ट रलेटन—२०१
वाल्मीकि—२२६
विवेकानंद—२२६
विलियम जैक्सन—२३२, २४०
विमलकुमार नोपानी—३१८, ३२०
विधानचंद्र राय—२५५
विजयमल सांड—३०४, ३२०
विट्ठलभाई पटेल—१२८
वियोगी हरि—१६७
विद्यापति—११३
विष्णु दिगंबरजी—१०७
विट्ठलदास थैकरसे—९२
विनोबा भावे—२२५
वेदव्यास—२२६
शंकराचार्य—२२६

शरदचंद्र बोस—१८९
शर्मन ऐडम्स—२३२, २४०
शादीलाल—१२७
शांति—११४, २०९, ३१६
शार्प—५३
शार्दूलसिंह—१९
शिवनारायणजी—७-८, १८-२६, ३६, ४५, ४७-५०, ६२, २२०-२२१, २२५, २५५, २७१, ३६०
शीशाराम ओला—३२२
श्रीरामजी—३५-३६
श्रीप्रकाशजी—९५
श्रीपाल—२२४
श्योमबल्श मिश्र—४९
शुकदेव पांडेय—२२२, २६६
शोभारामजी—१८-२०, २३-२४, ३६
संजय गांधी—२६४
सरोजकुमार पोद्दार—३१८, ३२०
संत ज्ञानेश्वर—३३२
स्वामीजी—४९
स्नेहमयी—११४
सी० आर० दास—१२०
सी० बी० गुप्ता—२४२
एस० के० दत्त—१५०
सरोजनी नायडू—१५०, १५५
स्टाफोर्ड क्रिप्स—१८०, १८७–१८८
सरदार पटेल—१८९-१९०, १९७, २०२, २२१, २२८-२३१, २३५, २६० ३३८, ३५३
सी० वी० रमण—१९८, २२६
सरलाजी—२१३-२१४, २३६, २९०, २९२, २९५, ३०२, ३०५, ३१० ३१२, ३१४, ३२२
सी० एफ० एंड्रूज—२२१
सी० डी० देशमुख—२३५-२३६
सावित्री देवी—२१३
सिद्धार्थ—३२०
सिनक्लेयर विल्कस—२४०
सीताराम सेकसरिया—६८
सुखदेवदास बिड़ला—२१-२३
सुरेंद्रनाथ बनर्जी—९६
सूरदास—१०७
सुशीलादेवी—११५
सुरेश—१२३
सुशीला, डा०—१८३
सुदर्शन कुमारजी—२३८, २६५, ३२०
सुब्बुलक्ष्मी—२८१
सुशीलकुमार साबू—३१७-३१८
सैमुअल होर—१३६, १३८, १५०-१५१, १५६-१५७, १६३-१६५, १७२, १७४, १९८-१९९
हरखचंदजी मोहता—६९
हरिप्रसादजी सिंघी—३२०
हीरा—३०६
एच० सी० लड्ढा—२२४
हरिसिंह—१९७
हेनरी कोबोटलाज—२३९
हेरोल्ड लास्की—१५६
हेनरी स्ट्राकोश—१५६-१५८, १६१
हेनरी पेजक्राफ्ट—२०१
होमी मोदी—१८६
हृदयनाथ कुंजरू—२२१
त्रैयंबक शास्त्री—१११, १२४

मनुष्य के अत्यंत साधारण आचरण से ही पता चल जाता है कि उसमें सचाई कहां तक है। जो छोटी-छोटी बातों में सचाई का प्रयोग नहीं करता, जो अपनी सारी क्रियाओं के संबंध में अव्यवस्थित है, जिसने न सोने-उठने का नियम बना रखा है और न खाने और व्यायाम का, जो भोजन स्वास्थ्य की दृष्टि से नहीं करता, केवल स्वाद के निमित्त करता है, ऐसे मनुष्य के जीवन से बड़ी-बड़ी बातों की आशा नहीं करनी चाहिए। जो लोग अव्यवस्थित हैं, समय के पाबन्द नहीं हैं, उनके नाम को उच्चाकांक्षाओं के बहीखाते में 'बट्टे खाते नावें' लिख देना चाहिए। सफलता ऐसे लोगों के लिए पैदा नहीं हुई, जो अव्यवस्थित हैं, असंयमी हैं, और बिना चरित्र-बल वाले हैं।

कुछ लोगों ने महात्माजी से संदेश मांगा था, जो उन्होंने इस प्रकार भेजा था, 'ईमानदार बनो, आत्मसंयम रखो और चरित्र को ऊंचा बनाओ।' चाहे हम छोटे हों या बड़े, यदि हम सब इसको अविकल रूपेण धारण कर लें तो फिर किसी बात से डरना भी फिजूल है।

—घनश्यामदास